मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाई देसाई
नवजीवन मुद्रणालय अहमदाबाद-१४

पहली आवृत्ति २ १९५३
पुनर्मुद्रण ३ १९५५
पुनर्मुद्रण १ १९५८
पुनर्मुद्रण ५ १९६१
पुनर्मुद्रण १ १९६२

सम्पादकका निवेदन

आज जब कि देशके विभिन्न भागोंमें ग्रामविकास और सामूहिक कल्याणकी योजनाओं पर अमल हो रहा है हमें लगा कि गांवोंके पुनर्निर्माणके बारेमें गांधीजीके विचार एक जगह संक्षेपमें संकलित कर दिये जायं तो बड़ा काम होगा।

जैसा कि सब कोई जानते हैं, गांधीजी अपनेको ग्रामवासी ही मानते थे और गांवमें ही बस गये थे। गांवोंकी जरूरतें पूरी करनेके लिए उन्होंने अनेक संस्थायें कायम की थीं और ग्रामवासियोंकी शारीरिक आर्थिक सामाजिक और नैतिक स्थिति सुधारनेकी उन्होंने भरसक कोशिश की थी। उनके सामने इस बातकी बड़ी साफ तसवीर थी कि गांवोंमें क्या किया जाना चाहिये और क्या नहीं किया जाना चाहिये। पश्चिमी शिक्षा ग्रहण करनेके बावजूद वे उस खाईको पूरनेमें सफल हो सके थे जो आम तौर पर हमारे देशमें पढ़े-लिखे — शिक्षित — लोगोंको गांववालोंसे अलग कर देती है। उनमें अपने आपको गांववालोंके साथ एकरूप कर देनेकी और उन्हींकी नजरसे उनकी समस्याओंको देखनेकी अनोखी शक्ति और प्रतिभा थी।

इसके अलावा हमारी आध्यात्मिक परम्पराके अनुसार वे चरित्र बल और आध्यात्मिक विकासको बहुत बड़ा महत्त्व देते थे। आज पाश्चात्य प्रभावमें आकर हम केवल भौतिक सम्पत्तिके उत्पादनको ही सारा महत्त्व देनेकी तरफ झुक रहे हैं। गांधीजीने इस खतरेको समझ लिया था कि आज दुनिया जो आत्मनाशकी ओर बढ़ रही है उसका मुख्य कारण यही है कि वह भौतिक ध्येयोंके पीछे पड़ गई है, जिनका नैतिक और आध्यात्मिक आदर्शोंसे कोई संबंध नहीं है।

इसके फलस्वरूप यदि एक तरफ गांवोंके अभाव गरीबी और भूखको मिटानेकी उनकी उत्कट इच्छा ग्रामसुधारकी उनकी योजनाओंको जन्म देनेका कारण बनी है तो दूसरी तरफ अहिंसा शांति सामाजिक न्याय और छोटेसे छोटे तथा उपेक्षित लोगोंके लिए भी स्वावलम्बन और स्वयंपूर्णताके

दूसरी पुस्तकें पढ़ें। दूसरी तरफ ग्रामसफाई और ग्रामसेवकोंकी पढ़ाई जैसे विषय यहां ज्यादा विस्तारसे दिये गये हैं, क्योंकि और कहीं उनका विवेचन नहीं हुआ है।

इस पुस्तकमें दिये गये बहुतसे शीर्षक मूल शीर्षकोंसे नहीं मिलते। हमने प्रस्तुत पुस्तकके विषयोंके अनुकूल उन्हें बदलकर नया रूप दे दिया है। लेखोंका पाठ मूल रूपमें ही है, सिवा इसके कि कहीं-कहीं उनके कुछ हिस्से ही दिये गये हैं और छूटे हुए हिस्सोंको किसी चिह्न द्वारा सूचित नहीं किया गया है।

१ सितम्बर, १९५२ — भारतन् कुमारप्पा

पाठकोंसे

मेरे लेखोंका मेहनतसे अध्ययन करनेवालों और उनमें दिलचस्पी लेनेवालोंसे मैं यह कहना चाहता हूं कि मुझे हमेशा एक ही रूपमें दिखाई देनेकी कोई परवाह नहीं है। सत्यकी अपनी खोजमें मैंने बहुतसे विचारोंको छोड़ा है और अनेक नई बातें मैं सीखा भी हूं। उमरमें भले मैं बूढ़ा हो गया हूं लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता कि मेरा आन्तरिक विकास होना बन्द हो गया है या देह छूटनेके बाद मेरा विकास बन्द हो जायगा। मुझे एक ही बातकी चिन्ता है और वह है प्रतिक्षण सत्य-नारायणकी वाणीका अनुसरण करनेकी मेरी तत्परता। इसलिए जब किसी पाठकको मेरे दो लेखोंमें विरोध जैसा लगे तब अगर उसे मेरी समझदारीमें विश्वास हो तो वह एक ही विषय पर लिखे दो लेखोंमें से मेरे बादके लेखको प्रमाणभूत माने।

हरिजनबन्धु ३०-४-३३ — गांधीजी

अनुक्रमणिका

हमार गांवोंका पुनर्निर्माण

१

गांवोंका स्थान

गांवोंकी सेवा करनेसे ही सच्चे स्वराज्यकी स्थापना होगी। अन्य सब प्रयत्न निरर्थक सिद्ध होंगे।

यंग इंडिया २६-१२-२

अगर गांव नष्ट हो जायें तो हिन्दुस्तान भी नष्ट हो जायगा। वह हिन्दुस्तान ही नहीं रह जायगा। दुनियामें उसका मिशन ही खतम हो जायगा।

हरिजन २९-८-३६

सच तो यह है कि हमें गांववाला भारत और शहरोंवाला भारत इन दोनोंमें से एकको चुन लेना है। देहात उतने ही पुराने हैं जितना कि यह भारत पुराना है। शहरोंको विदेशी आधिपत्यने बनाया है। जब यह आधिपत्य मिट जायगा तब शहरोंको देहातके मातहत होकर रहना पड़ेगा। आज तो शहरोंका बोलबाला है और वे गांवोंकी सारी दौलत खींच लेते हैं। इससे गांवोंका ह्रास और नाश हो रहा है। गांवोंका शोषण स्वयं एक संगठित हिंसा है। अगर हमें स्वराज्यकी रचना अहिंसाके पाये पर करनी है तो गांवोंको उनका उचित स्थान देना होगा।

हरिजनसेवक २ -१- ४

२

गांवोंका पुनर्निर्माण (सामान्य)

स्वराज्यमें ग्रामसेवा

स्वयंसेवक और स्वयंसेविकायें गांवोंमें जाकर लोगोंको स्वराज्य-धर्मकी शिक्षा दें। वे गांवोंको साफ और स्वावलम्बी बनानेका धर्म लोगोंको सिखायें। स्वराज्यमें सरकार गांवोंको साफ नहीं करायेगी, बल्कि लोग उन्हें अपने समझ कर खुद ही साफ करेंगे। ग्रामोद्योगोंका नाश होनेसे गांव बरबाद हुए हैं, ग्रामोद्योगोंका पुनरुद्धार करनेसे ही उनका पुनरुद्धार होगा। इसमें चरखा मध्यबिन्दु है और उसके आसपास दूसरे धंधे प्रतिष्ठित हैं।

इस तरह हर आदमी परिश्रमका मूल्य समझे और अगर सब लोग परिश्रमी बन जायं और जनताके कल्याणके लिए काम करें, तो जनताके लाखों रुपये बच जायं, उसके धनकी वृद्धि हो और वह कमसे कम कर देकर अधिकसे अधिक सुखी हो।

अहिंसक स्वराज्यमें कोई किसीका शत्रु नहीं होगा, सब अपना-अपना काम करेंगे, कोई निरक्षर नहीं रहेगा, उत्तरोत्तर सबके ज्ञानकी वृद्धि होती जायगी। सारी प्रजामें कमसे कम बीमारियां होंगी, कोई दरिद्री नहीं होगा और परिश्रम करनेवालेको बराबर काम मिलता रहेगा। स्वराज्यमें जुआ, मद्यपान, व्यभिचार या वर्ग-विग्रहके लिए कोई गुंजाइश नहीं होगी। धनी लोग अपने धनका विवेकपूर्ण उपयोग करेंगे — भोग-विलास और ऐश-आरामको बढ़ानेमें उसे बरबाद नहीं करेंगे। स्वराज्यमें यह नहीं होना चाहिये कि मुट्ठीभर धनी लोग रत्नजटित प्रासादोंमें रहें और हजारों-लाखों लोग हवा और प्रकाशसे रहित कोठरियोंमें पशुओंका जीवन बितायें। उसमें हिन्दू-मुस्लिम, स्पृश्य-अस्पृश्य तथा ऊंच-नीचके कोई भेद नहीं होने चाहिये।

(गांधीजी द्वारा राजकोटकी प्रजाके नाम लिखा गये इसी

ग्राम-स्वराज्य

ग्राम-स्वराज्यकी मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जो अपनी अहम जरूरतोंके लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा; और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतोंके लिए — जिनमें दूसरोंका सहयोग अनिवार्य होगा — वह परस्पर सहयोगसे काम लेगा। इस तरह हरएक गांवका पहला काम यह होगा कि वह अपनी जरूरतका तमाम अनाज और कपड़ेके लिए कपास खुद पैदा कर ले। उसके पास इतनी फाजिल जमीन होनी चाहिये, जिसमें ढोर चर सकें और गांवके बड़ों व बच्चोंके लिए मनबहलावके साधन और खेलकूदके मैदान वगैराका बन्दोबस्त हो सके। इसके बाद भी जमीन बची, तो उसमें वह ऐसी उपयोगी फसलें बोयेगा, जिन्हें बेचकर वह आर्थिक लाभ उठा सके; यों वह गांजा, तम्बाकू, अफीम वगैराकी खेतीसे बचेगा। हरएक गांवमें गांवकी अपनी एक नाटकशाला, पाठशाला और सभा-भवन रहेगा। पानीके लिए उसका अपना इन्तजाम होगा — वाटरवर्क्स होंगे — जिससे गांवके सभी लोगोंको शुद्ध पानी मिला करेगा। कुओं और तालाबों पर गांवका पूरा नियंत्रण रखकर यह काम किया जा सकता है। बुनियादी तालीमके आखिरी दर्जे तक शिक्षा सबके लिए लाजिमी होगी। जहां तक हो सकेगा, गांवके सारे काम सहयोगके आधार पर किये जायेंगे। जात-पांत और क्रमागत अस्पृश्यताके जैसे भेद आज हमारे समाजमें पाये जाते हैं, वैसे इस ग्राम समाजमें बिल्कुल न रहेंगे। सत्याग्रह और असहयोगके शस्त्रके साथ अहिंसाकी सत्ता ही ग्रामीण समाजका शासन-बल होगी। गांवकी रक्षाके लिए ग्राम-सैनिकोंका एक ऐसा दल रहेगा, जिसे लाजिमी तौर पर, बारी-बारीसे गांवके चौकी-पहरेका काम करना होगा। इसके लिए गांवमें ऐसे लोगोंका रजिस्टर रखा जायगा। गांवका शासन चलानेके लिए हर साल गांवके पांच आदमियोंकी एक पंचायत चुनी जायगी। इसके लिए नियमानुसार एक खास निर्धारित योग्यतावाले गांवके बालिग स्त्री-पुरुषोंको अधिकार होगा कि वे अपने पंच चुन लें। इन पंचायतोंको सब प्रकारकी आवश्यक सत्ता और अधिकार रहेंगे। चूंकि इस ग्राम-स्वराज्यमें आजके प्रचलित अर्थोंमें सजा या दण्डका कोई रिवाज नहीं रहेगा, इसलिए यह पंचायत अपने एक

शासके कार्यकालमें स्वयं ही धारासभा न्यायसभा और कारोबारी सभाका सारा काम संयुक्त रूपसे करेगी। आज भी अगर कोई गांव चाहे तो अपने यहां इस तरहका प्रजातंत्र कायम कर सकता है। उसके इस काममें मौजूदा सरकार भी ज्यादा दस्तंदाजी नहीं करेगी। क्योंकि उसका गांवसे जो भी कारगर संबंध है, वह सिर्फ मालगुजारी वसूल करने तक ही सीमित है। यहां मैंने इस बातका विचार नहीं किया है कि इस तरहके गांवका अपने पास-पड़ोसके गांवोंके साथ या केन्द्रीय सरकारके साथ अगर वैसी कोई सरकार हुई क्या संबंध रहेगा। मेरा हेतु तो ग्राम-शासनकी एक रूपरेखा पेश करनेका ही है। इस ग्राम-शासनमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आधार रखनेवाला संपूर्ण प्रजातंत्र काम करेगा। व्यक्ति ही अपनी इस सरकारका निर्माता भी होगा। उसकी सरकार और वह दोनों अहिंसाके नियमके वश होकर चलेंगे। अपने गांवके साथ वह सारी दुनियाकी शक्तिका मुकाबला कर सकेगा। क्योंकि हरएक देहातीके जीवनका सबसे बड़ा नियम यह होगा कि वह अपनी और अपने गांवकी इज्जतकी रक्षाके लिए मर मिटे।

जो चित्र यहां उपस्थित किया गया है उसमें असंभव जैसी कोई चीज नहीं है। संभव है ऐसे गांवको तैयार करनेमें एक आदमीकी पूरी जिन्दगी खतम हो जाय। सच्चे प्रजातंत्रका और ग्राम-जीवनका कोई भी प्रेमी एक गांवको लेकर बैठ सकता है और उसीको अपनी सारी दुनिया मानकर उसके काममें गड़ सकता है। निश्चय ही उसे इसका अच्छा फल मिलेगा। वह गांवमें बैठते ही एक साथ गांवके भंगी कतवैये चौकीदार, वैद्य और शिक्षकका काम शुरू कर देगा। अगर गांवका कोई आदमी उसके पास न फटके तो भी वह सन्तोषके साथ अपने सफाई और कताईके काममें जुटा रहेगा।

हरिजनसेवक २–८–'४२

ग्राम-इकाई

मेरी कल्पनाकी ग्राम-इकाई मजबूतसे मजबूत होगी। मेरी कल्पनाके गांवमें १ आदमी रहेंगे। ऐसे गांवको अगर स्वावलम्बनके आधार पर अच्छी तरह सुगठित किया जाय तो वह बहुत कुछ कर सकता है।

हरिजन ४–८–'४६

समग्र ग्राम-विकास

देहातवालोंमें वह कला और कारीगरी आनी चाहिये जिससे बाहर उनकी पैदा की हुई चीजोंकी कीमत की जा सके। जब गांवोंका पूरा-पूरा विकास हो जायगा तो देहातियोंकी बुद्धि और आत्माको सन्तुष्ट करनेवाली कला-कारीगरीके धनी स्त्री-पुरुषोंकी गांवोंमें कमी नहीं रहेगी। गांवमें कवि होंगे चित्रकार होंगे शिल्पी होंगे भाषाके पंडित और खोज करनेवाले लोग भी होंगे। थोड़ेमें जिन्दगीकी ऐसी कोई चीज न होगी जो गांवमें न मिले। आज हमारे देहात उजड़े हुए और कूड़े-कचरेके ढेर बने हुए हैं। कल वहीं सुन्दर बगीचे होंगे और ग्रामवासियोंको ठगना या उनका शोषण करना नामुमकिन हो जायगा।

इस तरहके गांवोंकी पुनर्रचनाका काम आजसे ही शुरू हो जाना चाहिये। गांवोंकी पुनर्रचनाका काम कामचलाऊ नहीं बल्कि स्थायी होना चाहिये।

उद्योग हुनर, तन्दुरुस्ती और शिक्षा इन चारोंका सुन्दर समन्वय करना चाहिये। नई तालीममें उद्योग और शिक्षा तन्दुरुस्ती और हुनरका सुन्दर समन्वय है। इन सबके मेलसे माके पेटमें आनेके समयसे लेकर बुढ़ापे तकका एक खूबसूरत फूल तैयार होता है। यही नई तालीम है। इसलिए मैं शुरूमें ग्राम-रचनाके टुकड़े नहीं करूंगा बल्कि यह कोशिश करूंगा कि इन चारोंका आपसमें मेल बैठे। इसलिए मैं किसी उद्योग और शिक्षाको अलग नहीं मानूंगा बल्कि उद्योगको शिक्षाका जरिया मानूंगा और इसीलिए ऐसी योजनामें नई तालीमको शामिल करूंगा।

हरिजनसेवक १ –११–'४६

पैसेका स्थान

[श्री घनश्यामदास बिड़लाके साथ हुई बातचीतसे।]

आप खूब पैसा इकट्ठा करके अपने ग्रामवासियोंके एक अच्छे विकास क्षेत्रम क्यों नहीं फैलाते?

नहीं जितनेकी मुझे जरूरत होती है उससे ज्यादा पैसा इकट्ठा करनेमें मेरा विश्वास नहीं है।

३

ग्राम-सफाई

गांवोंकी सफाई करना

गांवोंमें करनेके काम ये हैं कि उनमें जहां-जहां कूड़े-कर्कट तथा गोबरके ढेर हों वहां-वहांसे उनको हटाया जाय और कुओं तथा तालाबोंकी सफाई की जाय। अगर कार्यकर्ता लोग नौकर रखे हुए भंगियोंकी भांति खुद रोज सफाईका काम करना शुरू कर दें और साथ ही गांववालोंको यह भी बतलाते रहें कि उनसे सफाईके कार्यमें शरीक होनेकी आशा रखी जाती है ताकि आगे चलकर अन्तमें सारा काम गांववाले स्वयं करने लग जायें तो यह निश्चित है कि आगे या पीछे गांववाले इस कार्यमें अवश्य सहयोग देने लगेंगे।

वहांके बाजार तथा गलियोंको सब प्रकारका कूड़ा-कर्कट हटाकर स्वच्छ बना देना चाहिये। फिर उस कूड़ेका वर्गीकरण कर देना चाहिये। उसमें से कुछका तो खाद बनाया जा सकता है, कुछको सिर्फ जमीनमें गाड़ देना भर बस होगा और कुछ हिस्सा ऐसा होगा कि जो सीधा संपत्तिके रूपमें परिणत किया जा सकेगा। वहां मिली हुई प्रत्येक हड्डी एक बहुमूल्य कच्चा माल होगी जिससे बहुतसी उपयोगी चीजें बनाई जा सकेंगी या जिसे पीसकर कीमती खाद बनाया जा सकेगा। कपड़ेके फटे-पुराने चिथड़ों तथा रद्दी कागजोंसे कागज बनाये जा सकते हैं और इधर-उधरसे इकट्ठा किया हुआ मल-मूत्र गांवके खेतोंके लिए स्वर्णमय खादका काम देगा। मल-मूत्रको उपयोगी बनानेके लिए यह करना चाहिये कि उसके साथ — चाहे वह सूखा हो या तरल — मिट्टी मिलाकर उसे ज्यादासे ज्यादा एक फुट गहरा गड्ढा खोदकर जमीनमें गाड़ दिया जाय। गांवोंकी स्वास्थ्य-रक्षा पर लिखी हुई अपनी पुस्तकमें डॉ० पूअरे कहते हैं कि जमीनमें मल-मूत्रको नौ या बारह इंचसे अधिक गहरा नहीं गाड़ना चाहिये। (मैं यह बात केवल स्मृतिके आधार पर लिख रहा हूं।) उनकी मान्यता

यह है कि जमीनकी ऊपरी सतह सूक्ष्म जीवोंसे परिपूर्ण होती है और हवा एवं रोशनीकी सहायतासे — जो कि आसानीसे वहां तक पहुंच जाती है — ये जीव मल-मूत्रको एक हफ्तेके अन्दर-अन्दर एक अच्छी मुलायम और सुगन्धित मिट्टीमें बदल देते हैं। कोई भी ग्रामवासी स्वयं इस बातकी सच्चाईका पता लगा सकता है। यह कार्य दो प्रकारसे किया जा सकता है। या तो पाखाने बनाकर उनमें शौच जानेके लिए मिट्टी तथा लोहेकी बाल्टियां रख दी जायं और फिर प्रतिदिन उन बाल्टियोंको पहलेसे तैयार की हुई जमीनमें खाली करके ऊपरसे मिट्टी डाल दी जाय या फिर जमीनमें चौरस गड्ढा खोदकर सीधे उसीमें मल-मूत्रका त्याग करके ऊपरसे मिट्टी डाल दी जाय। यह मल-मूत्र या तो देहातके सामूहिक खेतोंमें गाड़ा जा सकता है या व्यक्तिगत खेतोंमें। लेकिन यह कार्य तभी संभव है जब कि गांववाले सहयोग दें। कोई भी उद्योगी ग्रामवासी कमसे कम इतना काम तो अब भी कर ही सकता है कि मल-मूत्रको एकत्र करके उसको अपने लिए सम्पत्तिमें परिवर्तित कर दे। आजकल तो यह सारा कीमती खाद जो लाखों रुपयोंकी कीमतका है प्रतिदिन व्यर्थ जाता है और बदलेमें हवाको गन्दा करता तथा बीमारियां फैलाता रहता है।

आराम और गर्वके साथ हाथमें ले लें वैसे कि कलम और पैंसिलको लेते हैं तो इस काममें खर्चका कोई सवाल ही नहीं उठेगा। अगर किसी खर्चकी जरूरत पड़ेगी भी तो वह केवल झाडू, फावड़ा, टोकरी, कुदाली और शायद कुछ कीटाणु-नाशक दवाइयां खरीदने तक ही सीमित रहेगा। सूखी राख संभवतः उतनी ही अच्छी कीटाणु-नाशक दवा है जितनी कि कोई रसायनशास्त्री दे सकता है। लेकिन यहां तो उदार रसायनशास्त्री हमको यह बतलायें कि गांवके लिए सबसे सस्ती और कारगर कीटाणु-नाशक चीज कौनसी है जिसे गांववाले स्वयं अपने गांवोंमें बना सकते हैं।

हरिजनसेवक १५-२-३५

खादके गड्ढे

पंजाबके ग्राम-सुधार संबंधी सरकारी महकमेके कमिश्नर श्री ब्रेन द्वारा खादके गड्ढोंके बारेमें प्रकाशित पत्रिकाके कुछ महत्त्वके अंश उद्धृत करके गांधीजीने लिखा:

इसमें जो कुछ लिखा है उसका समर्थन कोई भी कर सकता है। श्री ब्रेनने जैसे गड्ढोंके लिए लिखा है वैसोंकी आम तौर पर सिफारिश की जाती है यह मैं जानता हूं। मगर मेरी रायमें श्री पूअरेने जो एक फुटके छिछले गड्ढोंकी सिफारिश की है वह अधिक वैज्ञानिक एवं लाभप्रद है। उसमें खुदाईकी मजदूरी कम होती है और खाद निकालनेकी मजदूरी या तो बिलकुल ही नहीं होती या बहुत थोड़ी होती है। फिर उस मैलेका खाद भी लगभग एक सप्ताहमें ही बन जाता है। क्योंकि जमीनकी सतहसे ६-७ इंच तककी गहराईमें रहनेवाले जन्तुओं हवा और सूर्यकी किरणोंका उस पर असर होता है, जिससे गहरे गड्ढेमें दबाये जानेवाले मैलेके बनिस्बत कहीं अच्छा खाद तैयार हो जाता है।

लेकिन मैला ठिकाने लगानेके तरीके कितने ही तरहके क्यों न हों याद रखनेकी मुख्य बात यह है कि सब मैलेको गड्ढोंमें गाड़ा जरूर जाय। इससे दुहरा लाभ होता है — एक तो ग्रामवासी तन्दुरुस्त रहते हैं, दूसरे गड्ढोंमें दब कर बना हुआ खाद खेतोंमें डालनेसे फसलकी वृद्धि होती है और उनकी आर्थिक स्थिति सुधरती है। यह याद रखना चाहिये कि मैलेके अलावा

जानवरोंके शरीरके अवयव आदि चीजें अलग गाड़ी जानी चाहिये। यह निस्सन्दिग्ध है कि ग्राम-सुधारके काममें सफाई सबसे पहला कदम है।

हरिजनसेवक ८–३–३५

मैलेके गड्ढोंके बारेमें

एक सज्जन पूछते हैं :

(१) एक जगह एक फुट गहरा गड्ढा खोद कर उसमें मैला गाड़ा गया हो तो उसी जगह दूसरी बार मैला गाड़नेके पहले कितना समय चाहिये?

(२) साधारणतया धान बोनेके बाद तुरन्त ही खेत जोता जाता है। अगर बुआईसे आठेक दिन पहले मैला गाड़ा गया हो तो जब खेत जोता जायगा तब क्या वह मैला ऊपर न आ जायगा और इस तरह हलवाहों और बैलोंके पैरोंको खराब नहीं करेगा?

(१) ठीक ठीक बतलाई गई रीतिके अनुसार मैला अगर छिछले गड्ढेमें गाड़ा गया हो तो अधिकसे अधिक पन्द्रह दिन बाद बीज बोनेमें कोई अड़चन नहीं आती। एक साल उपयोग करनेके बाद उसी जगह

इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि मल-मूत्रके संचयसे खेतको फायदा तो जरूर होता है।

यह सलाह तो किसीने भी नहीं दी है कि मैला सीधा ज्योंका त्यों बतौर खादके सभी फसलोंके काममें आ सकता है। तात्पर्य तो यह है कि एक नियत समयके बाद मैला मिट्टीके साथ सुन्दर खादमें परिणत हो जाता है। मिट्टीमें गाड़नेके बाद मैलेको कई प्रक्रियाओंसे गुजरना पड़ता है तब कहीं जमीन जुताई और बुआईके उपयुक्त होती है। इसकी अचूक कसौटी यह है जहां मैला गाड़ा गया हो उस जमीनको नियत समयके बाद खोदने पर अगर मिट्टीसे कोई दुर्गन्ध न आती हो और उसमें मैलेका नाम-निशान तक न हो तो समझ लेना चाहिये कि उस जमीनमें अब बीज बोया जा सकता है। मैंने पिछले तीस साल इसी प्रकार मैलेके खादका उपयोग हर तरहकी फसलके लिए किया है और इससे अधिकसे अधिक लाभ हुआ है।

हरिजनसेवक १७-५-३५

इस मिश्र खादको मैं सुनहरा खाद कहता हूं। ऐसे खादसे जमीनकी ताकत बनी रहती है, उसका शोषण नहीं होता। जब कि कहा जाता है कि रासायनिक खादसे जमीन कमजोर हो जाती है। साथ ही कूड़े-कचरेका सही उपयोग आसपासके वातावरणको साफ और शुद्ध रखता है, जिससे लोगोंका स्वास्थ्य सुधरता है।

हरिजनसेवक २८-१२-'४७

४

ग्राम-आरोग्य

डॉक्टरी मददकी सीमा

अखिल भारत ग्रामोद्योग संघकी प्रवृत्तियां शुरू होते ही डॉक्टरी सहायताने कई कार्यकर्ताओंके कार्यक्रममें यदि एकमात्र नहीं तो अत्यन्त महत्त्वका स्थान जरूर ले लिया है। इस सहायतामें डॉक्टरी आयुर्वेदिक यूनानी या होमियोपैथीकी दवाइयां या सब दवाइयां मिलाकर ग्रामवासियोंको मुफ्त बांटनेका काम रहता है। इन दवाइयोंके व्यापारी ग्राम जानेवाले कार्यकर्ताओंको कुछ दवाइयां देकर आभारी बनानेके लिए हमेशा तैयार रहते हैं। इन दवाइयोंकी कीमत उन्हें बहुत थोड़ी चुकानी होती है और इस तरह दी गई ये दवाइयां उनकी अपनी रायमें — अगर वे इस कामके प्रति केवल स्वार्थकी दृष्टिसे ही देखें — बदलेमें उन्हें ज्यादा फायदा दे सकती हैं। गरीब बीमार बेकीमत बेहिसाब अधूरी जानकारी रखनेवाले या अक्सर ज्यादा उत्साही कार्यकर्ताओंके शिकार हो जाते हैं। इनमें से तीन-चौथाई दवाइयां न सिर्फ बेकार होती हैं बल्कि शुरू नहीं तो अनुचित रूपमें बीमारोंको नुकसान भी पहुंचाती हैं। जहां ये बीमारोंको थोड़े समयके लिए राहत भी पहुंचाती हैं वहां बादके बाजारमें उनकी जगह [illegible] दवाइयां आम तौर पर मिलती हैं।

इसलिए जिस डॉक्टरी राहतका मैंने वर्णन किया है उसे अ० भा० ग्रामोद्योग संघ बिलकुल छोड़ रहा है। इसलिए उसकी मुख्य चिन्ता

स्वास्थ्य-सम्बन्धी और आर्थिक बातोंमें गांववालोंको शिक्षा देनेकी है। लेकिन क्या इन दोनोंका कोई परस्पर सम्बन्ध नहीं है? क्या लाखों लोगोंके लिए स्वास्थ्य ही धन नहीं है? उनके शरीर, न कि उनकी बुद्धि धन कमानेके मुख्य साधन हैं। इसलिए ग्रामोद्योग संघ लोगोंको बीमारीसे बचनेकी शिक्षा देना चाहता है। सब कोई जानते हैं कि देशके लाखों लोगोंको पोषणकी दृष्टिसे बहुत घटिया खुराक मिलती है। और जो कुछ वे खाते हैं उसका दुरुपयोग करते हैं। सफाई और स्वच्छताका उन्हें बिलकुल ज्ञान नहीं है। गांवोंमें सफाईका नाम नहीं है। इसलिए अगर ये दोष दूर कर दिये जायं और गांवके लोग सफाईके सादे नियमोंको समझ कर उनका पालन करने लगें तो उनकी ज्यादातर बीमारियां बिना ज्यादा प्रयत्न या खर्चके गायब हो सकती हैं। इसलिए संघ दवाखाने खोलनेका विचार नहीं करता। इस बातकी जांच की जा रही है कि गांव दवा रूपमें क्या दे सकते हैं। सतीशबाबूके सस्ते इलाज* उसी दिशामें किये गये प्रयत्न हैं। यद्यपि वे अत्यन्त सादे हैं, फिर भी सतीशबाबू इस बातका प्रयोग कर रहे हैं कि उपकारिताको कम किये बिना इन दवाओंकी संख्या बहुत कम कैसे की जा सकती है। वे बाजारमें मिलनेवाली जड़ी बूटियोंका अध्ययन कर रहे हैं उनकी परीक्षा कर रहे हैं और उसी तरहकी अपनी दवाओंसे उनकी तुलना कर रहे हैं। हेतु यही है कि भोले-भाले ग्रामवासियोंको रहस्यमयी गोलियों और दवाओंके डरसे दूर रखा जाय।

हरिजन ५-४-३५

डॉक्टरी मदद

एक ग्रामसेवक लिखते हैं

सी-एक बरारकी बस्तीके एक छोटेसे गांवमें मैं काम कर रहा हूं। आप कहते हैं कि दवा-दारू देनेके पहले ग्रामसेवकोंको

* घर और गांवका डॉक्टर — लेखक सतीशचन्द्र दासगुप्त खादी प्रतिष्ठान १५—कॉलेज स्क्वेयर कलकत्ता। पृष्ठ २४+१२८७ कीमत १ — — ।

स्वच्छता पर ध्यान देना चाहिये। लेकिन जब कोई ज्वर-पीड़ित ग्रामवासी मदद मांगने आवे तब ग्रामसेवकका क्या कर्तव्य है? अब तक तो मैं उन्हें गांवमें मिलनेवाली देसी जड़ी-बूटियोंको ही काममें लानेकी सलाह देता आया हूं।

बड़ा ज्वर, अजीर्ण या इसी प्रकारके सामान्य रोगोंके रोगी ग्राम सेवकोंकी मदद लेने आयें वहां वे उनकी वो मदद कर सकें जरूर करें। रोगका निदान भर अच्छी तरह मालूम हो जाय फिर गांवमें उस रोगकी सस्तीसे सस्ती और अच्छीसे अच्छी दवा तो मिल ही जायगी। दवाइया कोई अपने पास रखना ही चाहे तो अरंडीका तेल कुनैन और उबला हुआ गरम पानी ये सबसे बढ़िया दवाइयां हैं। अरंडीका तेल सभी जगह मिल सकता है। सनायकी पत्तीसे भी वही काम निकल सकता है। कुनैनका मैं कम ही उपयोग करता हूं। प्रत्येक प्रकारके ज्वरमें कुनैन देनेकी जरूरत नहीं — और न प्रत्येक ज्वर कुनैनसे काबूमें ही आता है। अधिकांश ज्वर तो पूर्ण या अर्ध-उपवाससे ही शांत हो जाते हैं। अन्न और दूधको छोड़ देना और फलोंका रस अथवा मुनक्काका उबला हुआ पानी लेना और नीबूके ताजे रस या इमलीके साथ गुड़का उबला हुआ पानी लेना भी अर्ध-उपवास है। उबला हुआ पानी तो रामबाण औषध है। आंतोंको वह ढकेलता है और पसीना लाता है, जिससे बुखारका जोर कम हो जाता है। यह एक ऐसी रोगाणुनाशक औषध है जिसमें किसी भी तरहका जोखिम नहीं है और सस्ती इतनी कि एक कौड़ी भी खर्च नहीं होगी। हर हालतमें जब भी पानी पीना हो उसे कुछ ठिराकर पीना चाहिये उतना ही गरम पानी पीना चाहिये जितना कि अच्छी तरह सहन हो सके। उबालनेका मतलब महज गरम करना नहीं है। पानीमें जब बुलबुले उठने लगें और उसमें भाप निकलने लगे तभी उसे उबला हुआ समझना चाहिये।

जहां ग्रामसेवक खुद किसी निश्चय पर न पहुंच सकें वहां उन्हें स्थानीय वैद्योंका अवश्य पूरा-पूरा सहयोग लेना चाहिये। जहां वैद्य न हो अथवा भरोसेका वैद्य न हो और ग्रामसेवक पड़ोसके किसी परमार्थी डॉक्टरको जानते हों वहां उन्हें जरूर उसकी मदद लेनी चाहिये।

पर उन्हें यह मालूम होना चाहिये कि रोगके उपचारमें भी स्वच्छताका ध्यान सबसे महत्त्वका है। उन्हें यह याद रखना चाहिये कि सबसे बड़ा वैद्य तो प्रकृति ही है। इस बातका वे विश्वास रखें कि मनुष्य जिसे बिगाड़ देता है प्रकृति उसे सुधारती रहती है। आखिर तो वह उस समय मालूम पड़ती है जब मनुष्य लगातार उसकी अवहेलना किया करता है। तब जो असाध्य हो जाता है, उसे नष्ट कर डालनेके लिए वह अपने अन्तिम और अचूक दूत मृत्यु को भेजती है और उस देहधारीको नया चोला पहना देती है। इसलिए स्वच्छता और स्वास्थ्य-रक्षाका कार्य करनेवाले मनुष्य प्रत्येक व्यक्तिके सर्वश्रेष्ठ सहायक या उत्तम वैद्य हैं भले उन्हें इसका पता हो या न हो।

हरिजनसेवक १७-५-३५

दवा-दारूकी सहायता

भिन्न-भिन्न संस्थाओंकी ओरसे किये जानेवाले ग्रामकार्य या समाज-सेवाके कामकी जो रिपोर्टें मेरे पास आती हैं, मैं देखता हूं कि उनमें से अधिकांशमें दवा-दारूकी सहायताके कामको बहुत महत्त्व दिया जाता है। यह सहायता बीमारोंको दवा बांटनेके रूपमें की जाती है — और बीमारोंका तो कहना ही क्या? उन्होंने किसीको दवा बांटनेकी बात कहते सुना नहीं कि उसे आकर घेर लिया। इस तरह जो व्यक्ति दवा बांटता है, उसे इसके लिए कोई खास अभ्यास करनेका कष्ट नहीं उठाना पड़ता। रोग और उसके लक्षणोंका विशेष या किसी तरहका ज्ञान रखनेकी उसे जरूरत नहीं होती। यहां तक कि दवायें भी अक्सर दयालु दवा-फरोशोंसे मुफ्त ही मिल जाती हैं। और धनियोंसे इसके लिए चन्दा भी हमेशा मिल ही जाता है, जो चन्दा देते समय ज्यादा सोच-विचार नहीं करते। बस इसी खयालसे उन्हें आत्म-सन्तोष हो जाता है कि हम जो दान दे रहे हैं उससे दीन-दुखियोंको मदद होगी।

सेवाके जितने भी तरीके हैं उनमें यह सामाजिक सेवा मुझे सबसे ज्यादा कठिन और अक्सर खतरनाक भरी हुई मालूम होती है। इसकी बुराईका आरम्भ तो तभी हो जाता है जब कि मरीज यह समझने लगता

है कि बस दवा गटक जानेके सिवा मुझे और कुछ नहीं करना है। दवा पाकर वह जानेके लिए सावधान बने ऐसा नहीं होता। अलबत्ता कभी-कभी वह पहलेसे भी दया-बीता बन जाता है — क्योंकि इस बातकसे वह तत्संबंधी बचाव या संयम रखनेकी फिक्र नहीं करता कि अनियमितता और आपर वाहीसे कुछ गड़बड़ी भी हुई तो क्या सेंत-मेंत या बराय नाम पैसोंकी कुछ दवा लेकर वा भला और सब ठीक-ठाक हो जायगा। फिर इस बातसे कि उसे ऐसी (दवा-दारूकी) मदद बिना कुछ खर्च किये मुफ्त ही मिल जाती है, उसके उस आत्म-सम्मानका भी ह्रास होता है जो बिना कोई काम किये खैरातमें कुछ लेना गवारा नहीं कर सकता।

लेकिन दवा-दारूकी सहायताका एक और भी तरीका है और निस्सं देह वह हमारे लिए एक बड़ी नियामत है। जो लोग रोग और उसे पैदा करनेवाले कारणोंको जानते हैं वही ऐसी सहायता कर सकते हैं। वे बीमारोंको खाली दवा ही नहीं देंगे बल्कि यह भी बतायेंगे कि उन्हें क्या खास बीमारी है और क्या करनेसे आगे वे उससे बचे रह सकते हैं। ऐसे सेवक रात-दिनकी कोई परवाह नहीं करेंगे और हर समय सहायताके लिए तैयार रहेंगे। ऐसी सहायतासे रोग-निवारण ही नहीं होगा बल्कि स्वास्थ्य-विज्ञानकी शिक्षा भी लोगोंको मिलेगी जिससे वे यह जान सकेंगे कि स्वास्थ्य और सफाईके नियमोंका पालन करते हुए वे किस प्रकार तन्दुरुस्त रह सकते हैं। लेकिन ऐसी सेवा बहुत कम देखनेमें आती है। अधिकांश रिपोर्टोंमें तो दवा-दारूकी सहायताका उल्लेख बतौर इश्तिहारके ही होता है, ताकि लोग उसे पढ़कर उनके दूसरे ऐसे कामकाजके लिए चन्दा देनको प्रेरित हों जिनमें शायद दवा-दारूकी सहायतासे भी कम आवश्यकता होती है। इसलिए समाज-सेवाके कार्यमें लगे हुए सब भाई मेंसे चाहे वे शहरोंमें काम करते हों या गांवोंमें मेरी प्रार्थना है कि दवा-दारूकी अपनी इस हलचलको वे अपने सेवाकार्यका सबसे कम महत्त्वपूर्ण अंग मानें। बेहतर तो यह होगा कि अपनी रिपोर्टोंमें ऐसे सहायता-कार्यका वे कोई उल्लेख ही न करें। इसके बजाय वे ऐसे उपायोंका सहारा लें जिनस उस स्थानमें बीमारीमें रुकावट हो तो अलबत्ता वे अच्छा काम करेंगे। दवा दारूका सामान तो जहां तक हो कम करना चाहिये। जो दवायें उनके

गांवमें ही मिल सकें उनके उपयोगकी जानकारी उन्हें हासिल करनी चाहिये और जहां तक हो उन्हींका इस्तेमाल करना चाहिये। ऐसा करने पर उन्हें पता लगेगा जैसा कि सिन्दी गांवमें हमें मालूम होता जा रहा है, कि बहुतसे रोगोंमें तो गरम पानी, धूप, साफ नमक और सोडाके साथ कभी-कभी अण्डीके तेल व कुनैनका प्रयोग करनेसे ही काम चल जाता है। जो भी ज्यादा बीमार हो उन सबको शहरके बड़े अस्पतालमें भेज देनेका हमने नियम बना लिया है। नतीजा यह हुआ है कि मरीज लोग मीराबहनके पास दौड़े चले आते हैं और उनसे स्वास्थ्य, सफाई व रोग-निवारणके उपाय मालूम करते हैं। दवाके बजाय रोग-निवारणका उपाय ग्रहण करनेमें उन्हें कोई आपत्ति हो ऐसा मालूम नहीं पड़ता।

हरिजनसेवक १६–११–३६

बीमारियोंका कुदरती इलाज

दूसरे दिन सुबहसे बीमार आने लगे। कोई ९ होंगे। गांधीजीने उनमें से पांच या छहकी जांच की और उन सबकी बीमारीके प्रकारको देखकर थोड़े हेरफेरके साथ सबको एकसे ही इलाज सुझाये। मसलन् रामनामका जप, सूर्यस्नान, बदनको जोरसे रगड़ना या घिसना, कटिस्नान, दूध, छाछ, फल, फलोंका रस और पीनेके लिए काफी साफ और ताजा पानी। गांधीजीने कहा, "कुदरती इलाजके लिए बहुत बड़ी पदवियोंकी या ऊंचे दरजेकी युनिवर्सिटीकी डिग्रियां हासिल करनेकी जरूरत नहीं पड़ती। जो चीज हम सब तक पहुंचानी है सादगी उसकी खास निशानी होनी चाहिये। जो चीज करोड़ोंके कामके लिए है उसके लिए बड़े-बड़े पोथोंको उलटकर प्राप्त किये गये ज्ञानकी जरूरत नहीं। ऐसा पाण्डित्य तो बहुत थोड़े लोग पा सकते हैं इसलिए वह अमीरोंके ही कामका होता है। लेकिन हिन्दुस्तान तो ऐसे ७ लाख गांवोंमें बसा हुआ है जिन्हें कोई जानता तक नहीं, जो बहुत छोटे-छोटे हैं और दूर-दूर एक तरफ बसे हुए हैं। उनमें से कई तो ऐसे हैं जिनकी आबादी ५००–६ से ज्यादा नहीं, और कुछ ? से भी कम आबादीवाले होते हैं। मेरा बस चले तो मैं ऐसे ही किसी गांवमें जाकर रहूं। वह सच्चा हिन्दुस्तान है मेरा हिन्दुस्तान है

उसीके लिए मैं जीता हूं। इन गरीबोंके बीच आप बड़ी-बड़ी डिग्रियोंवाले डॉक्टरों और अस्पतालोंकी कीमती चीजोंके बड़े काफिलेको किस तरह ले जायेंगे? उन्हें तो सादे कुदरती इलाज और रामनामका ही आधार है।"

गांववालोंको चेतावनी देते हुए गांधीजीने कहा "मैं सख्त काम लेनेवाला आदमी हूं। आप लोगोंके साथ रहूंगा तो न मैं अपने साथ रियायत करूंगा और न आप लोगोंके साथ। मैं आपके घरोंमें जाऊंगा आपके मोहल्लों और रास्तोंकी जांच करूंगा आपकी पटरें देखूंगा और आप लोगोंके पाखानोंको भी देखूंगा। अगर इनमें कहीं भी धूल या गन्दगी रही तो मैं उसे बर्दाश्त नहीं करूंगा।"

हरिजनसेवक ७-४-'४६

मेरी रायमें जिस जगह शरीर-सफाई, घर-सफाई और ग्राम सफाई हो तथा युक्ताहार और योग्य व्यायाम हो वहां कमसे कम बीमारी होती है। और, अगर चित्तशुद्धि भी हो तो कहा जा सकता है कि बीमारी असंभव हो जाती है। रामनामके बिना चित्त शुद्धि नहीं हो सकती। अगर देहातवाले इतनी बात समझ जायं तो वैद्य हकीम या डॉक्टरकी जरूरत न रह जाय।

कुदरती उपचारके गर्भमें यह बात रही है कि मानव-जीवनकी आदर्श रचनामें देहातकी या शहरकी आदर्श रचना आ ही जाती है। और उसका मध्यबिन्दु तो ईश्वर ही हो सकता है।

हरिजनसेवक २६-५-'४६

कुदरती इलाजके मर्ममें यह बात रही है कि उसमें कमसे कम खर्च और ज्यादासे ज्यादा सादगी होनी चाहिये। कुदरती उपचारका आदर्श ही यह है कि जहां तक संभव हो उसके साधन ऐसे होने चाहियें कि उपचार देहातमें ही हो सके। जो साधन नहीं हैं, वे पैदा किये जाने चाहियें। कुदरती उपचारमें जीवन-परिवर्तनकी बात आती है। यह कोई वैदकी दी हुई पुड़िया लेनेकी बात नहीं है, और न अस्पताल जाकर मुफ्त दवा लेने या वहां रहनेकी बात है। जो मुफ्त दवा लेता है वह भिक्षुक बनता है। जो कुदरती उपचार करता है

वह कभी भिक्षुक नहीं बनता। वह अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाता है और अच्छा होनेका उपाय खुद ही कर लेता है। वह अपने शरीरमें से जहर निकाल कर ऐसा प्रयत्न करता है, जिससे दुबारा बीमार न पड़ सके। और कुदरती इलाजमें मध्यबिन्दु तो रामनाम ही है न?

पथ्य खुराक — युक्ताहार — इस उपचारका अनिवार्य अंग है। आज हमारे देहात हमारी ही तरह कंगाल हैं। देहातमें साग-सब्जी फल दूध वगैरा पैदा करना कुदरती इलाजका खास अंग है। इसमें जो समय खर्च होता है, वह व्यर्थ नहीं जाता। बल्कि उससे सारे देहातियोंको और आखिरमें सारे हिन्दुस्तानको लाभ होता है।

हरिजनसेवक २-६-'४६

देहातियोंके लिए मेरी कल्पनाके नैसर्गिक उपचारका मतलब यह है कि वह देहातमें जितने देहाती साधन मिल सकें उनसे बिजली और बरफकी मददके बिना जितना किया जा सके उतना ही किया जाय। यह काम तो मेरे जैसेका ही हो सकता है, जो देहाती बन गया है और जिसकी देह शहरोंमें रहते हुए भी जी देहातमें ही रहता है।

हरिजनसेवक ११-८-'४६

एक प्रश्नके उत्तरमें गांधीजीने कहा: मेरा कुदरती इलाज तो सिर्फ गांववालों और गांवोंके लिए ही है। इसलिए उसमें खुर्दबीन, एक्स रे वगैराकी कोई जगह नहीं है। और न ही कुदरती इलाजमें कुनैन, एमिटीन, पेनिसिलीन वगैरा दवाओंकी गुंजाइश है। उसमें अपनी सफाई, घरकी सफाई, गांवकी सफाई और तन्दुरुस्तीकी हिफाजतका पहला और पूरा-पूरा स्थान है। इसकी तहमें खयाल यह है कि अगर इतना किया जाय या हो सके तो कोई बीमारी ही न हो। और बीमारी आ जाय तो उसे मिटानेके लिए कुदरतके सभी कानूनों पर अमल करनेके साथ-साथ रामनाम ही असल इलाज है। यह इलाज सार्वजनिक या आम नहीं हो सकता। जब तक खुद इलाज करनेवालेमें रामनामकी सिद्धि न आ जाय, तब तक रामनाम रूपी इलाजको एकदम आम नहीं बनाया जा सकता। लेकिन पंचमहा

मूर्तोमें से यानी पृथ्वी पानी आकाश तेज और हवामें से जितनी शक्ति ली जा सके उतनी लेकर रोग मिटानेकी यह एक कोशिश है। और मेरे विचारसे कुदरती इलाज यहीं खतम हो जाता है। इसलिए आजकल उरुलीकांचनमें जो प्रयोग चल रहा है वह गांववालोंको तन्दुरुस्तीकी हिफाजत करनेकी कला सिखाने और बीमारोंकी बीमारीको पंचमहाभूतोंकी मददसे मिटानेका प्रयोग है। जरूरत मालूम होने पर उरुलीमें मिलनेवाली जड़ी-बूटीका उपयोग किया जा सकता है और पथ्य-परहेज तो कुदरती इलाजका जरूरी हिस्सा है ही।

हरिजनसेवक १८–८–'४६

आरोग्यके नियम

श्री व्रजलाल नेहरू मेरे जैसे ही सनकी हैं। उन्होंने अखबारोंमें एक पत्र लिखा है जिसमें आरोग्य-मंत्री राजकुमारी अमृतकुंवरके इस कथनकी तारीफ की है कि हमारी अनेक बीमारियां हमारे अज्ञान और लापरवाहीसे पैदा होती हैं। उन्होंने यह सूचना की है कि आज तक आरोग्य-विभागका ध्यान अस्पताल वगैरा खोलने पर ही रहा है उसके बदले राजकुमारीने जिस अज्ञानका जिक्र किया है उसे दूर करनेकी तरफ इस विभागको ध्यान देना चाहिये। उन्होंने यह भी सुझाया है कि इसके लिए एक नया विभाग खोलना चाहिये। परदेशी हुकूमतकी यह एक बुरी आदत थी कि जो सुधार करना हो उसके लिए नया विभाग और नया खर्च खड़ा किया जाय। लेकिन हम क्यों इस बुरी आदतकी नकल करें? बीमारियोंका इलाज करनेके लिए अस्पताल भले रहें लेकिन उन पर इतना वजन क्यों दिया जाय? घर बैठे स्वास्थ्य कैसे संभाला जाय इसकी तालीम देना आरोग्य विभागका पहला काम होना चाहिये। इसलिए आरोग्य-मंत्रीको यह समझना चाहिये कि उनके नीचे जो डॉक्टर और नौकर काम करते हैं उनका पहला फर्ज है जनताके आरोग्यकी रक्षा और उसकी संभाल करना।

श्री व्रजलाल नेहरूकी एक सूचना ध्यान देने लायक है। वे लिखते हैं कि बीमारियोंके इलाजके बारेमें ढेरों किताबें देखनेमें आती

है लेकिन कुदरती इलाज करनेवालोंके सिवा डिग्रीधारी डॉक्टरोंने आरोग्यके नियमोंके बारेमें कोई किताब लिखी हो ऐसा कभी सुना नहीं गया। इसलिए श्री मेहता यह सूचना करते हैं कि आरोग्य मन्त्री मजबूर डॉक्टरोंसे एसी किताबें लिखवायें। ये किताबें लोगोंकि समझने लायक भाषामें लिखी जायें तो जरूर उपयोगी साबित होंगी। शर्त यही है कि एसी किताबोंमें तरह-तरहके टीके लगानेकी बात नहीं होनी चाहिये। आरोग्यके नियम ऐसे होने चाहिये जिनका पालन डॉक्टर-वैद्योंकी मददके बिना घर बैठे हो सके। ऐसा न हो तो कुएसे निकल कर खाईमें गिरने जैसी बात हो सकती है।

बेशक आरोग्यके नियमोंकी पढ़ाई स्कूलों और कॉलेजोंमें अनिवार्य होनी चाहिए।

हरिजनसेवक २८-१२-४७

इसलिए सादीमें सादी और सस्तीसे सस्ती खुराकका पता लगाना चाहिए जो गांववालोंको उनकी कोई हुई तन्दुरुस्ती फिरसे पानेमें मदद करे। गांववालोंके हर भोजनमें अगर हरी पत्तियां कुछ जायं तो वे ऐसी बहुतसी बीमारियोंसे बच सकेंगे जिनके आज वे शिकार बने हुए हैं। गांववालोंके भोजनमें विटामिनोंकी कमी है। उनमें से बहुतसे विटामिन हरी पत्तियोंसे मिल सकते हैं। एक प्रसिद्ध अंग्रेज डॉक्टरने मुझे दिल्लीमें कहा था कि हरी पत्ता-भाजियोंका ठीक-ठीक उपयोग खुराक-संबंधी परम्परागत विचारोंमें क्रान्ति पैदा कर देगा और आज दूधसे जो पोषण मिलता है, उसका बहुत-सा हिस्सा हरी पत्ता-भाजियोंसे मिल सकेगा। बेशक इसका मतलब यह है कि हिन्दुस्तानके जंगली घास-पातोंमें छिपी हुई जो बेशुमार हरी पत्तियां मिलती हैं उनके पोषक तत्त्वोंकी ब्यौरेवार जांच की जाय और उनके बारेमें कड़ी मेहनतसे खोज की जाय।

हरिजन १५-२-३५

ग्रामसेवकोंके साथ चर्चा

चूंकि आजके भोजनमें व्यंजनोंकी सूची मैंने कुछ ध्यानसे साथ बनाई है और खासकर ग्रामसेवकोंकी आवश्यकताओंको दृष्टिमें रखकर, इसलिए उसके बारेमें कुछ विस्तारसे साथ मुझे कहना ही होगा। चार आनेका ऐसा भोजन करानेका विचार था जो पोषक हो और जिस एक औसत दरजेका ग्रामवासी हमने आठ पन्नेके बामकी कमस कम जो मजदूरी नियत की है यानी तीन आने उसके अन्दर आसानीसे प्राप्त कर सके।

आज हम लोग कुल ९८ भोजन करनेवाले थे और हमारे भोजन पर कुल खर्च रु ९-१४-३ आया है। इसका यह अर्थ हुआ कि हरएकके भोजन पर १ पैसा कुछ ही अधिक खर्च हुआ है। तफसील इस प्रकार है

		रु आ पा
९८	सेर गहूंका आटा	१-८-०
६	टमाटर	०-११ ३
६	गुड़	-१-३

१२	कुम्हड़ा	०—७—६
१	मछलीका तेल	१—२—०
१२½	दूध	१-११-०
२	सोयाबीन	—६—०
२ ,,	नारियलकी गिरी	—४—०
१६	कैथ	०—२—०
	इमली और नमक	०—२—१
	ईंधन	१—०—०
	कुल रु	२।१४।१

विनोबाने मुझे यह सलाह दी थी कि मुझे आप लोगोंके लिए रोटी बनवानेकी झंझटमें नहीं पड़ना चाहिये बल्कि गेहूंका दलिया (जो हम लोग सबेरे खाते हैं) दिया जाय इस तरह रोटी बनानेकी झंझटसे हम बच जायगे। पर मैंने अपने मनमें कहा कि नहीं आप नौजवानोंको जिन्हें ईश्वरने अच्छे मजबूत दांत दिये हैं अच्छी सिकी हुई कुरकुरी भाकरी जरूर देनी चाहिये। भाकरी कोई भी बना सकता है। एक जगहसे दूसरी जगह उसे हम आसानीसे अपने साथ ले जा सकते हैं और यह दो दिन तक रखी जा सकती है। गूंधनेके पहले आटेमें मछलीके तेलका मोन दे दिया गया था जिससे भाकरी मुलायम और भुरभुरी बने। कुछ पत्तियां और कच्ची तरकारी तो हमें खानी ही चाहिये इसलिए हमने टमाटर और दो चटनियां भोजनमें रखी थी। एक चटनी तो कैथकी थी जो इधर बहुतायतसे मिलता है और दूसरी हमारे बगीचेमें उगी हुई पत्तियोंकी बनाई गई थी। कैथमें रेचक और ग्राहक दोनों ही गुण हैं और थोड़ासा गुड़ डाल देनेसे उसकी चटनी अच्छी स्वादिष्ट हो जाती है। दूसरी चटनीमें थोड़ी नारियलकी गिरी इमली और नमक था ताकि पत्तियोंमें एक अच्छा जायका आ जाय। हरी पत्तियां हमें किसी न किसी रूपमें जरूर ही खानी चाहिये जिससे कि हमें अपने भोजनमें उचित मात्रामें विटामिन मिलते रहें। हमने जो तरकारी चुनी थी वह नसीम सस्ती है और हमारे गांवोंमें हर जगह होती है। चटनीमें

मैंने इमलीकी भी बड़ाई की। इमलीके विरुद्ध लोगोंमें जो एक बुरी धारणा है उसके होते हुए भी यह देखनेमें आया है कि वह एक अच्छी रेचक और रक्तशोधक वस्तु है। हमारे एक साथीको यहाँ मलेरिया हो गया था। उन्हें मैंने इमलीके पानीकी कई मात्रायें दी थीं जिनका उन पर अच्छा असर पड़ा था। कब्जमें भी मैंने इमलीको अनेक बार आजमाया है।

आहारमें दूधका होना जरूरी है। आपके भोजनमें पाव-पाव दूध था। पर मैंने आपको घी नहीं दिया। तो भी मैं आशा करता हूँ कि घी आपको एक तरहसे मिल गया क्योंकि मैंने आपको सोया बीन और तेल दिया है। जहाँ अच्छे शुद्ध घीका मिलना संदेहास्पद है वहाँ मिलावटी घी खानेसे क्या लाभ? लेकिन दूध या छाछका मिलना जरूरी है चाहे वह कितनी ही कम मात्रामें मिले। घीको आप बिना किसी डरके अपने आहारमें से निकाल सकते हैं।

दो मुख्य चीजें जो आपको करनी हैं उनमें से एक तो यह है कि ग्रामवासियोंको आप लोग एक अच्छे पुष्टाहारका निश्चय करा दें और उसी प्रकारके आहारसे आप स्वयं भी संतुष्ट रहें। कुछ लोग ऐसे हो सकते हैं जिनके आहारमें बहुतसी निकम्मी चीजें रहती हैं और ऐसे तो बहुत हैं जिनके आहारमें विटामिनोंकी बड़ी भारी कमी रहती है। उन्हें आपको एक अच्छा उपयुक्त आहार बतलाना है। आप लोग खुद भी गोपालन सीखें और ग्रामवासियोंको भी उसका मर्म समझायें। यह हमारे लिए एक शरमकी बात समझी जानी चाहिये कि हमारे अनेक गाँवोंमें आज दूध नहीं मिल रहा है। दूसरा मुख्य कर्तव्य है सफाईका। इसमें सन्देह नहीं कि यह बहुत ही कठिन काम है। पर अगर आपको इन दोनोंमें सफलता मिल गई अर्थात् ग्रामवासियोंमें आप एक अच्छा उपयुक्त आहार दाखिल करा दें और गाँवोंको अच्छा साफ-सुथरा बना दें तो इसका यह अर्थ हुआ कि मानव-शरीरको आपने ईश्वरका निवास-मन्दिर होने लायक और ठीक तरहसे काम करनेका एक सुन्दर साधन बना दिया।

हरिजनसेवक २-११-३५

६

ग्राम-शिक्षा

दुनियाकी उत्तमसे उत्तम भावना लेकर भी अंग्रेज अध्यापक अंग्रेज और भारतीय बच्चोंके बीचके भेदको भलीभांति नहीं समझ सके हैं न समझ सकेंगे। हमारे देशकी आबोहवामें शिक्षापद्धति उनकी हमारे लिये आवश्यक नहीं है न प्रधानतया ग्रामीण वातावरणमें पले हुए हमारे बच्चोंको उस शिक्षाकी ही जरूरत है जो खासकर यहाँकी वायुमण्डलमें पले हुए अंग्रेज बच्चोंके लिए आवश्यक है।

जब हमारे बालक शालाओंमें भरती किये जाते हैं उन्हें पट्टी पेन्सिल या पुस्तकोंकी जरूरत न होनी चाहिये बल्कि उनके हाथोंमें सादे ग्रामीण औजार होने चाहिये जिन्हें वे स्वतंत्रतापूर्वक और काम उठाकर इस्तेमाल कर सकें। इसका मतलब हुआ शिक्षा प्रणालीमें क्रान्ति। मगर शिक्षा क्रान्तिके दूसरा कोई उपाय ही नहीं है, जिससे शालामें जाने योग्य हरएक बालकके लिए शिक्षा सुलभ हो जाय।

यह एक मानी हुई बात है कि वर्तमान सरकारी शालाओंमें पढ़ना लिखना और गणित (अंग्रेजीके तीन आर रीडिंग राइटिंग और अरिथमेटिक) की जो शिक्षा दी जाती है बालक-बालिकायें भावी जीवनमें उससे बहुत कम लाभ उठाते हैं। ज्यादातर बातें तो साल भरके भीतर ही भूल जाती हैं फिर भले ही उपयोगमें न आनेके कारण ऐसा होता हो। इन बातोंकी ग्राम्य वातावरणमें कोई जरूरत भी नहीं होगी।

लेकिन अगर बालकोंको उनके आसपासके वातावरणके अनुकूल शिक्षा दी जाय तो न केवल उससे उन पर होनेवाले खर्चका पूरा होगा बल्कि वे भावी जीवनमें इस शिक्षासे लाभ भी उठा सकेंगे। मैं तो ऐसा सम्पूर्ण स्वावलम्बी शालाकी कल्पना कर सकता हूँ जिसमें सम्पूर्ण बनाई या बनाईका काम सिखाया जाता है और साथ ही जिसमें ग्राम उपयोगी काम भी हो।

जिस योजनाका मैं उल्लेख कर रहा हूँ उसमें साहित्यकी शिक्षाका बहिष्कार नहीं किया गया है। प्राथमिक शिक्षाका कोई भी पाठ्यक्रम तब तक सम्पूर्ण नहीं माना जायगा जब तक उसमें पढ़ने-लिखने और गणितको स्थान न होगा। हां इतना जरूर है कि पढ़ना लिखना सबसे आखिरी बात—आखिरी सालमें आयगा जब कि बालक और बालिकायें भलीभांति वर्णमाला सीखनेके लिए तैयार-सी रहेंगी। हाथसे लिखना एक कला है। चित्रकारके चित्रकी भांति हरएक अक्षर सही-सही लिखा जाना चाहिये। यह तभी हो सकता है जब कि बालक-बालिकाओंको प्राथमिक चित्रकलाका ज्ञान मिला हो। इस तरह औद्योगिक शिक्षाके साथ-साथ जिसमें उनका पाठशालाका अधिकतर समय व्यतीत होगा व प्राथमिक इतिहास भूगोल और गणितकी जबानी तालीम भी पाते जायंगे। वे सदाचार सीखेंगे रात-दिनकी व्यावहारिक सफाई-स्वच्छता और आरोग्यका यथार्थ-पाठ पढ़ेंगे, जो कुछ सीखेंगे उसे अपने साथ अपने घरोंमें ले जायेंगे और कुटुम्बमें एक क्रान्तिकारीका काम करने लगेंगे।

हिन्दी-नवजीवन ११–७–२९

७

ग्रामोद्योग और खेती

कपड़ा

बेशक हरएक गांवके लिए आदर्श यही है कि वह खुद अपने लिए काते और बुने जैसे कि आज अधिकतर गांव अपनी जरूरतका अनाज खुद पैदा कर लेते हैं। हर गांवके लिए अपनी जरूरतका कुछ अनाज खुद पैदा करनेके बनिस्बत अपने लिए कातना और बुनना ज्यादा आसान है। हर गांव अपनी कपास इकट्ठी कर सकता है। और बिना किसी कठिनाईके कात और बुन सकता है।

यंग इंडिया ११–७–२९

चरखा हमारे लिए समूचे सामूहिक जीवनकी बुनियाद है। उसके बिना किसी भी स्थायी सार्वजनिक जीवनका निर्माण करना असंभव है। यही एक ऐसी प्रत्यक्ष दिखाई देनेवाली चीज है जो देशके नीचेसे नीचे आदमीके साथ हमारा अटूट संबंध कायम करती है और उनमें आशाका संचार करती है। उसके साथ हम कई चीजें जोड़ सकते हैं या हमें जोड़नी चाहिये। लेकिन हम पहले उसे अपनानेका दृढ़ निश्चय कर लें जिस तरह एक होशियार राज इमारत शुरू करनेसे पहले अपनी नींवकी मजबूतीका निश्चय कर लेता है। और इमारत जितनी बड़ी होगी नींव उतनी ही गहरी और मजबूत होगी। इसलिए अगर इसका नतीजा देखना हो तो चरखेको भारतमें सब जगह फैलाना होगा।

यंग इंडिया ४-९-२४

मजदूरी पानेके लिए की जानेवाली कताई सिर्फ उन्हीं गांवोंमें दाखिल की जाय जहांके लोग इसलिए हमेशा अभावग्रस्त रहते हैं कि उन्हें खेतीसे काफी उपज नहीं होती और उनके पास फालतू वक्त रहता है।

अपनी जरूरतके लिए की जानेवाली कताई हर गांवमें दाखिल की जाय भले वहां गरीबी हो या न हो। ऐसे मामलोंमें लोगोंको दी जानेवाली मददका रूप यह हो सकता है — उन्हें ओटाई, धुनाई या कताई सिखाई जाय लागत दामों पर कपास और औजार दिये जाय तथा मामूली दरों पर उनका सूत उनके लिए बुनवा दिया जाय।

यंग इंडिया २-५-२९

चरखा

चरखा मेरे लिए तो जनसाधारणकी आशाओंका प्रतिनिधित्व करता है। जनसाधारणकी स्वतंत्रता जैसी भी वह थी चरखेके नाशके साथ ही खतम हो गई। चरखा ग्रामवासियोंके लिए खेतीका पूरक बना था और खेतीको इससे प्रतिष्ठा थी। विधवाओंका यह बन्धु और सहारा था। ग्रामवासियोंको यह काहिलीसे भी बचाता था क्योंकि

इसमें कपाससे रुई व बिनौलोंको अलग करना, रुईकी धुनाई, कताई, बुनाई, रंगाई आदि अगले-पिछले सभी उद्योग शामिल थे। गांवके बढ़ई और लोहार भी इसके कारण काममें लगे रहते थे। चरखेसे सात लाख गांव आत्म-निर्भर बने हुए थे। चरखेके जानेसे घानीसे तेल निकालने जैसे अन्य ग्रामीण उद्योग भी नष्ट हो गये। इन उद्योगोंका स्थान किन्हीं नये उद्योगोंने नहीं लिया। इसलिए गांववाले अपने विविध धंधोंसे वंचित हो गये और अपनी उत्पादक बुद्धि तथा जो थोड़ी बहुत संपत्ति उन धंधोंसे मिल सकती थी उसको भी खो बैठे।

इसलिए गांववालोंको अगर आत्म-निर्भर बनना है तो सबसे स्वाभाविक बात यही हो सकती है कि चरखेका और उससे संबन्धित सब चीजोंका पुनरुद्धार किया जाय।

यह पुनरुद्धार तभी हो सकता है, जब कि बुद्धि और देश-भक्तिवाले स्वार्थत्यागी भारतीयोंकी सेना हिन्दुस्तानके गांवोंमें चरखेका सन्देश फैलानेके काममें लग जाय और ग्रामीणोंकी निस्तेज आंखोंमें आशा और प्रकाशकी ज्योति जगमगा दे। सच्चे सहयोग और सच्ची प्रौढ़-शिक्षाके प्रसारका यह बहुत बड़ा प्रयत्न है। चरखेके शान्त किन्तु निश्चित और जीवनप्रद परिभ्रमण की तरह ही इससे शान्त और निश्चित क्रान्ति होती है।

चरखेके बीस बरसके अनुभवने मुझे इस बातका विश्वास करा दिया है कि मैंने उसके पक्षमें यहां जो दलील दी है वह बिलकुल सही है। चरखेने गरीब मुसलमानों और हिन्दुओंकी एक समान सेवा की है। इसके द्वारा कोई पांच करोड़ रुपये बिना किसी दिखावे और शोरगुलके गांवोंके इन लाखों कारीगरोंकी जेबोंमें पहुंच चुके हैं।

इसलिए बिना किसी हिचकिचाहटके मैं कहता हूं कि चरखा हम सब धर्मोंको माननेवालोंको असली स्वराज्य तक जरूर ले जायेगा। क्योंकि चरखा गांवोंको उनके उपयुक्त स्थान पर पहुंचाकर ऊंच-नीचके भेदभावको नष्ट करता है।

हरिजनसेवक ११-४-'४

ग्रामोद्योग

ग्रामोद्योगोंके संबन्धमें कांग्रेसने जो प्रस्ताव पास किया है उसका रचयिता मैं हूँ और इन उद्योगोंकी उन्नतिके लिए जो संघ स्थापित होनेवाला है उसका एकमात्र सलाहकार भी मैं ही हूँ। इसलिए इन उद्योगोंके संबन्धमें और इनसे जनताके चरित्र तथा स्वास्थ्यको जिस लाभके होनेकी आशा है उसके विषयमें मेरे मनमें जो विचार चक्कर काट रहे हैं उन विचारोंको मैं क्यों न जनताके सामने रख दूँ।

हरिजन-यात्राके सिलसिलेमें जब इस वर्षके आरंभमें मैं मलाबार गया था तभी यह ग्रामोद्योग संघ स्थापित करनेका विचार एक प्रकारसे निश्चित हो गया था। एक खादी-सेवकके साथ बात करते हुए मैंने देखा कि शहरके लोगोंने गाँववालोंसे जिस चीजको लूटा और अविचारपूर्वक छीन लिया है, वह चीज अगर हमें ईमानदारीके साथ उन्हें लौटा देनी है तो एक ग्रामोद्योग संघ स्थापित करनेकी अत्यन्त आवश्यकता है।

आज यह बहुत कम लोगोंको मालूम होगा कि हिन्दुस्तानके छोटे-छोटे बचे-खुचे खेत-खलिहानोंमें खेती करनेमें किसानको लाभके बदले हानि ही हो रही है। गाँवके लोगोंमें आज जीवन नहीं दिखाई देता। उनके जीवनमें न आशा रही है न उमंग और न उत्साह है न स्फूर्ति। भूख धीरे-धीरे उनके प्राणोंको चूस रही है। ऊपर कर्जके गर्दनतोड़ बोझसे वे अधमरे हुए जा रहे हैं। साहूकार उन्हें कर्ज देता है क्योंकि न दे तो जाय कहाँ? न देनेसे तो उसका सारा पैसा डूब जाय। कितनी ही जाँच-पड़ताल की जाय गाँवोंके कर्जका यह गोरख-धंधा कभी सुलझनेका नहीं। आज तो हमने इसको काफी बारीकीसे की है फिर भी इस विषयकी हमारी जानकारी नगण्य ही है।

ग्रामोद्योगोंका यदि लोप हो गया तो भारतके ७ लाख गाँवोंका सर्वनाश ही समझिये।

ग्रामोद्योग-संबंधी मेरी प्रस्तावित योजना पर इधर दैनिक पत्रोंमें जो टीकायें हुई हैं उन्हें मैंने पढ़ा है। कई पत्रोंने तो मुझे यह सलाह दी है कि मनुष्यकी अन्वेषण-बुद्धिने प्रकृतिकी जिन शक्तियोंको अपने वशमें

कर लिया है उनका उपयोग करनेसे ही गांवोंकी मुक्ति होगी। उन आलोचकोंका यह कहना है कि प्रगतिशील पश्चिममें जिस तरह पानी हवा तेल और बिजलीका पूरा-पूरा उपयोग हो रहा है उसी तरह हमें भी इन चीजोंको काममें लाना चाहिये। वे कहते हैं कि इन निगूढ़ प्राकृतिक शक्तियों पर कब्जा कर लेनेसे प्रत्येक अमेरिकावासी ३३ गुलामोंको रख सकता है, अर्थात् ३३ गुलामोंका काम वह इन शक्तियोंके द्वारा ले सकता है।

इस रास्ते अगर हम हिन्दुस्तानमें चले तो मैं यह बेधड़क कह सकता हूं कि प्रत्येक मनुष्यको ३३ गुलाम मिलनेके बजाय इस मुल्कके एक-एक मनुष्यकी गुलामी ३३ गुनी बढ़ जायगी।

यंत्रोंसे काम लेना उसी अवस्थामें अच्छा होता है जब कि किसी निर्धारित कामको पूरा करनेके लिए आदमी बहुत ही कम हों या नपे-तुले हों। पर यह बात हिन्दुस्तानमें तो है नहीं। यहां कामके लिए जितने आदमी चाहिये उनसे कहीं अधिक बेकार पड़े हुए हैं। इसलिए उद्योगोंके यंत्रीकरणसे यहांकी बेकारी घटेगी या बढ़ेगी? कुछ वर्गगज जमीन खोदनेके लिए मैं हलका उपयोग नहीं करूंगा। हमारे यहां सवाल यह नहीं है कि हमारे गांवोंमें जो लाखों-करोड़ों आदमी पड़े हैं उन्हें परिश्रमकी चक्कीसे निकालकर किस तरह छुट्टी दिलाई जाय बल्कि यह है कि उन्हें सालमें जो कुछ महीनोंका समय यों ही बैठे-बैठे आलसमें बिताना पड़ता है उसका उपयोग कैसे किया जाय। कुछ लोगोंको मेरी यह बात शायद विचित्र लगेगी पर दरअसल बात यह है कि प्रत्येक मिल सामान्यतः आज गांवोंकी जनताके लिए भयस्वरूप हो रही है। उनकी रोजी पर मैं मायाविनी मिलें छापा मार रही हैं। मैंने बारीकीसे आंकड़े एकत्र नहीं किये पर इतना तो कह ही सकता हूं कि गांवोंमें बैठकर कमसे कम दस मजदूर जितना काम करते हैं उतना ही काम मिलका एक मजदूर करता है। इसे यों भी कह सकते हैं कि दस आदमियोंकी रोजी छीनकर यह एक आदमी गांवमें जितना कमाता था उससे कहीं अधिक कमा रहा है। इस तरह कताई और बुनाईकी मिलोंने गांवोंके लोगोंकी जीविकाका एक बड़ा भारी

धन्धा छीन लिया है। इसकी दलीलका यह कोई जवाब नहीं है कि ये मिलें जो कपड़ा तैयार करती हैं वह अधिक अच्छा और काफी सस्ता होता है। कारण यह है कि इन मिलोंने अगर हजारों मजदूरोंका धंधा छीनकर उन्हें बेकार बना दिया है, तो सस्तेसे सस्ता मिलका कपड़ा गांवोंकी बनी हुई महंगीसे महंगी खादीसे भी महंगा है। कोयलेकी खानमें काम करनेवाले मजदूर जहां रहते हैं वहीं वे कोयलेका इस्तेमाल कर सकते हैं, इसलिए उन्हें कोयला महंगा नहीं पड़ता। इसी तरह जो ग्रामवासी अपनी जरूरत भरके लिए खुद खादी बना लेता है उसे वह महंगी नहीं पड़ती। पर मिलोंका बना कपड़ा अगर गांवोंके लोगोंको बेकार बना रहा है, तो चावल कूटने और आटा पीसनेकी मिलें हजारों स्त्रियोंकी न केवल रोजी ही छीन रही हैं, बल्कि बदलेमें तमाम जनताके स्वास्थ्यको हानि भी पहुंचा रही हैं। जहां लोगोंको मांस खानेमें कोई आपत्ति न हो और जहां मांसाहार पुसाता हो, वहां मैदा और पॉलिशदार चावलसे शायद हानि न होती हो, लेकिन हमारे देशमें जहां करोड़ों आदमी ऐसे हैं जो मांस मिले तो खानेमें आपत्ति नहीं करेंगे, पर जिन्हें मांस मिलता ही नहीं, उन्हें हाथकी चक्कीके पिसे हुए गेहूंके आटे और हाथ-कूटे चावलके पौष्टिक तथा जीवनप्रद तत्वोंसे वंचित रखना एक प्रकारका पाप है। इसलिए डॉक्टरों तथा दूसरे आहार-विशेषज्ञोंको चाहिये कि मैदे और मिलके कूटे पॉलिशदार चावलसे लोगोंके स्वास्थ्यको जो हानि हो रही है उससे वे जनताको आगाह कर दें।

मैंने खास ही नजरमें आनेवाली जो कुछ मोटी-मोटी बातोंकी तरफ यहां ध्यान खींचा है, उसका उद्देश्य यही है कि अगर ग्रामवासियोंको कुछ काम देना है, तो वह यंत्रोंके द्वारा संभव नहीं। उनके उद्धारका सच्चा मार्ग तो यही है कि जिन उद्योग-धंधोंको वे अब तक किसी प्रकार करते चले आ रहे हैं, उन्हींको भलीभांति जीवित किया जाय।

इसलिए मेरे अभिप्रायके अनुसार अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघका काम यह होगा कि जो उद्योग-धंधे आज चल रहे हैं उन्हें प्रोत्साहन दिया जाय और जहां हो सके और वांछनीय हो वहां नष्ट हो चुके या नष्ट हो रहे ग्रामोद्योगोंको गांवोंकी पद्धतिसे — अर्थात् उस रीतिसे

जिससे अनादि कालसे गांववाले अपनी झोंपड़ियोंमें काम करते आ रहे हैं — सजीव किया जाय। जिस प्रकार हाथकी ओटाई, धुनाई, कताई और बुनाईकी क्रियाओं और औजारोंमें बहुत उन्नति हुई है, उसी प्रकार ग्रामोद्योगोंकी पद्धतिमें भी काफी सुधार किया जा सकता है।

एक आलोचकने यह आपत्ति उठाई है कि प्राचीन पद्धतिका अनुसरण करके प्रत्येक मनुष्य अपनी व्यक्तिगत आकांक्षाकी पूर्ति कर लेता है, परन्तु इस रीतिसे सामूहिक कार्य कभी नहीं हो सकता। यह दृष्टि मुझे बड़ी ओछी मालूम होती है। इसके पीछे कोई गहरा विचार नहीं है। ग्रामवासी भले ही वस्तुओंको अपने झोंपड़ोंमें बैठ कर बनावें पर यह बात नहीं कि वे सब चीजें इकट्ठी न की जा सकें और उनसे होनेवाला मुनाफा लोगोंमें न बंट सके। ग्रामवासी किसीकी देखरेखमें किसी खास योजनाके अनुसार काम करें। कच्चा माल सार्वजनिक भंडारसे दिया जाय। अगर सामूहिक कार्य करनेकी इच्छा ग्रामवासियोंके अन्दर पैदा कर दी जाय तो सहयोग श्रम विभाग समयकी बचत और कार्य-कुशलताके लिए तो निश्चय ही काफी अवकाश है। आज ये सारी चीजें अखिल भारत चरखा-संघ ५ से ऊपर गांवोंमें कर रहा है।

किन्तु बाहर गांवोंकी खीर महलका सूर्य है और अन्यान्य विविध उद्योग इस मडलके ग्रह हैं। इन उद्योगरूपी ग्रहोंको खद्दररूपी सूर्यसे जो उष्णता और प्राणशक्ति मिल रही है, उसके बदलेमें वे खद्दरको टिकाये हुए हैं। बिना खादीके अन्य उद्योगोंका विकास होना असंभव है। किन्तु मैंने अपनी गत हरिजन-यात्रामें देखा कि अगर दूसरे उद्योग-धन्धे जिन्दा न किये गये तो खादीकी अधिक उन्नति नहीं हो सकती। ग्रामवासियोंमें अगर उनके फुरसतके समयका सदुपयोग करनेकी क्रियाशीलता और क्षमता उत्पन्न करती है, तो ग्रामजीवनका सभी पहलुओंसे स्पर्श करके उसमें नव चेतनाका संचार करना होगा। इन दो खयोंसे इसी बातकी अपेक्षा की जाएगी।

मुझे मालूम है कि एक वर्ग ऐसा है, जो खादीको आर्थिक दृष्टिसे लाभदायक मानता ही नहीं। मुझे आशा है कि इस वर्गके लोग मेरे

इस कथनसे भड़क नहीं जायेंगे कि खादी ग्रामसेवाकी प्रवृत्तियोंका केन्द्र है। खादी तथा अन्य ग्रामोद्योगोंका पारस्परिक संबंध बताये बिना मैं अपने अन्तरका कल्पनाचित्र ठीक-ठीक अंकित नहीं कर सकता था। जो लोग खादी और अन्य ग्रामोद्योगोंके इस संबंधको न मानते हों वे दूसरे उद्योगोंमें भले अपनी शक्ति लगायें।

हरिजनसेवक २१-११-१४

ग्रामोद्योगोंकी योजना

ग्रामोद्योगोंकी योजनाके पीछे मेरी कल्पना तो यह है कि हमें अपनी रोजमर्राकी आवश्यकताएं गांवोंकी बनी चीजोंसे ही पूरी करनी चाहिये और जहां यह मालूम हो कि अमुक चीजें गांवोंमें मिलती ही नहीं वहां हमें यह देखना चाहिये कि उन चीजोंको थोड़े परिश्रम और संगठनसे गांववाले बनाकर उनसे कुछ मुनाफा उठा सकते हैं या नहीं। मुनाफेका अंदाज लगानेमें हमें अपना नहीं किन्तु गांववालोंका खयाल रखना चाहिये। संभव है कि शुरूमें हमें साधारण भावसे कुछ अधिक देना पड़े और चीज हलकी मिले। पर अगर हम उन चीजोंके बनानेवालोंके काममें रस लें और यह आग्रह रखें कि वे बढ़ियासे बढ़िया चीजें तैयार करें और सिर्फ आग्रह ही नहीं रखें बल्कि उन लोगोंको पूरी मदद भी दें तो यह हो नहीं सकता कि गांवोंकी बनी चीजोंमें दिन-दिन तरक्की न होती जाय।

हरिजनसेवक २-११-१४

यंत्र चलानेवाले यंत्र क्यों नहीं?

एक पत्रलेखकके जवाबमें जिन्होंने हाथसे चावल कूटने और हाथ चक्कीसे आटा पीसनेका विरोध किया था गांधीजीने लिखा

कूटने-पीसनेके खातिर ही कूटने-पीसनेकी प्राचीन पद्धतिको फिरसे चालू करनेमें मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है। इस उद्योगको फिरसे चलानेकी मैं जो सलाह देता हूं उसका कारण यह है कि या लाखों-करोड़ों ग्रामवासी निकम्मे हो गये हैं उन्हें काम-धंधेमें लगानेका कोई दूसरा मार्ग ही नहीं है। मैं यह मानता हूं कि अगर हम आर्थिक

संकटके इस दिन-दिन बढ़ते हुए भारी बोझको दूर न कर सकें तो गांवोंका उद्धार होना असम्भव है। इसलिए ग्रामवासियोंको उनके व्यर्थ जाते हुए समयके सदुपयोगकी सलाह देना ही ठोस ग्रामसेवा है।

हरिजनसेवक ७-१२-३४

ग्रामोद्योग क्यों?

निश्चित उपयोगकी शायद ही कोई ऐसी चीज हो जो भारतके पहले गांववालोंने न बनाई हो और जिसे वे आज न बना सकते हों। अगर हम इस तरफ पूरी तरहसे अपना मन लगा दें और गांवों पर अपना ध्यान एकाग्र कर लें तो हम क्षणकी बातमें लाखों रुपया गांव वालोंकी जेबमें पहुंचा सकते हैं। आज तो हम उन्हें बिना कुछ मुआवजा दिये उलटे उन गरीबोंको लूट-खसोट रहे हैं। इस भयंकर सर्वनाशको आगे बढ़नेसे हमें अब रोक देना चाहिये। जो लोग आज अस्पृश्य माने जाते हैं उनकी प्रथानुमोदित अस्पृश्यता दूर करनेकी अपेक्षा अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन मेरे लिए अधिक व्यापक मानी रखने लगा है। शहरवालोंकी दृष्टिमें गांव अस्पृश्य हो गये हैं। शहरवाला उन्हें जानता नहीं, पहचानता नहीं। न वह गांवोंमें जाकर रहना चाहता है। अगर वह किसी गांवमें जा पहुंचता है तो वहां भी अपना वही शहरी जीवन जमाना चाहता है। यह तो तभी क्षम्य हो सकता है जब कि हम इतने शहर बसा सकें कि उनमें ३० करोड़ मनुष्य समा जायं। ग्रामोद्योगोंका पुनरुज्जीवन और ग्रामवासियोंकी बेकारी तथा इसके कारण उत्पन्न होनेवाली दिन-दिन बढ़ती हुई दरिद्रताका दूरीकरण अगर असम्भव है तो भारतके गांवोंको शहरोंमें परिणत कर देनेकी कल्पना तो और भी अधिक असम्भव है।

हरिजनसेवक ३०-११-३४

गांवोंकी चीजें काममें लें

[एक भाषणसे]

हमने गांववालोंके साथ घोर अन्याय बरतना शुरू किया है। उसे दूर करनेका एकमात्र रास्ता यह है कि उन्हें तैयार बाजारका यकीन

जिलाकर उनके नष्टप्राय उद्योग-धंधोंको फिरसे जिलानेके लिए उन्हें प्रोत्साहन दिया जाय। ईश्वरसे बढ़कर धीरज रखनेवाला और सहनशील दूसरा कोई नहीं है लेकिन उसके धीरज और सहनशीलताकी भी कोई सीमा है। अगर हम गांवोंके प्रति अपने फर्जकी उपेक्षा करेंगे तो अपने ही सर्वनाशको न्योतेंगे। यह फर्ज कोई बड़ा कठिन नहीं है। यह बिलकुल ही सीधा-सादा है। हमें अपनेमें ग्राम-मानस निर्माण करना होगा और अपनी तथा अपनी गृहस्थीकी जरूरतोंको ग्रामीण दृष्टिसे ही देखना होगा। इसमें बहुत ज्यादा खर्चका भी सवाल नहीं है। स्वयंसेवक पाससे पासके गांवोंमें जायें और उन्हें इस बातका विश्वास दिलायें कि जो कुछ वे पैदा करेंगे वह सब कस्बों और शहरोंमें खपकर बिक जायगा। यह ऐसा काम है जिसे हरएक जाति और धर्मके हर पार्टी और विश्वासके स्त्री और पुरुष कर सकते हैं। इसका हमारे देशके सच्चे अर्थशास्त्रसे मेल बैठता है।

हरिजन १-३-१५

गांवोंका शोषण बन्द हो

[एक बातचीतसे]

गांवोंमें फिरसे जान तभी आ सकती है जब यहांकी लूट-खसोट रुक जाय। बड़े पैमाने पर मालकी पैदावार जरूर ही व्यापारी चढ़ा-ऊपरी तथा माल निकालनेकी धुनके साथ-साथ गांवोंकी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे होनेवाली लूटके लिए जिम्मेदार है। इसलिए हमें इस बातकी सबसे ज्यादा कोशिश करनी चाहिये कि गांव हर बातमें स्वावलंबी और स्वयंपूर्ण हो जाय। वे अपनी जरूरतें पूरी करने भरके लिए चीजें तैयार करें। ग्रामोद्योगके इस अंगकी अगर अच्छी तरह रक्षा की जाय तो फिर भले ही देहाती लोग आजकलके उन यंत्रों और औजारोंमें भी काम ले सकते हैं जिन्हें वे बना और खरीद सकते हैं। शर्त सिर्फ यही है कि दूसरोंको लूटनेके लिए उनका उपयोग नहीं होना चाहिये।

हरिजनसेवक २९-८-११

मौजूदा शक्तिका सदुपयोग

सवाल — हमारे गांवोंमें आटा पीसनेकी चक्कियां एंजिनसे चलती हैं। इन एंजिनोंको नदियों कुओं या तालाबों पर लगानेसे बहुतसे खेतोंमें पानी देनेका काम बड़ी आसानीसे हो सकता है। यह काम सरकारके द्वारा क्यों न कराया जाय? एंजिनके मालिक क्या इतना सहयोग न देंगे?

जवाब — अगर हमारे गांवोंमें आटा पीसनेकी कलें हैं और वे एंजिनसे चलती हैं तो मैं इसे हमारी पामरताकी सीमा समझता हूं। हिन्दुस्तानमें कहीं इतनी कलें या इतने एंजिन नहीं चलते। मुझे उम्मीद है कि गुजरातके हमारे गांवोंमें ऐसा अनुचित काम हरगिज नहीं होता होगा। सारे हिन्दुस्तानमें ऐसे गांवोंकी संख्या भी हजारों तक नहीं जा सकती। लेकिन अगर यह सच है तो इसमें गांवके लोगोंका आलस्य जाहिर होता है। ये इतने ज्यादा एंजिन और पनचक्कियां इनके मालिकोंकी अविवेकभरी मूर्खता है। क्या गरीब लोगोंको इस हद तक मुहताज बनाकर धन कमाना मुनासिब होगा? फिर, इस तरहकी कलोंकी वजहसे आज देहातमें चलनेवाली पत्थरकी चक्कियां बेकार हो जायंगी। चक्की बनानेका उद्योग करनेवाले भी बेकार हो जायंगे। इस तरह तो गांवके उद्योगोंका और उनके साथ कलाका भी लोप हो जायगा। उनका नाश होकर दूसरा उपयोगी उद्योग शुरू हो जाय तो शायद बहुत कहनेका न रहे। मगर मैं नहीं जानता कि कहीं ऐसा हुआ है। इसके सिवा हाथकी चक्की चलानेवालोंमें प्राण रहता प्रमाणिया और मजमारा जो मजूर पसीना बहाते हैं उसका भी नाश हो जायगा।

लेकिन मुझे जो डरता है वह तो यह है। मेरे खयालसे आज इन एंजिनोंका दुरुपयोग हो रहा है। आजके इन हालातोंमें इन्हीं एंजिनोंका उपयोग अगर कुएं और तालाबसे पानी खींचकर खेतोंकी सिंचाई करने और अन्न बोनेके कामसे भी लिया जाय तो कितना अच्छा हो? इस हालतमें इन एंजिनोंका आजकलका दुरुपयोग रुक सकता है। सवाल पूछनेवालोंने सरकारी मदद जिक्र किया है। लेकिन क्या सचमुच इसमें सरकारी मददकी जरूरत हो सकती है? क्या आखिर लोग

सतत लोगोंके सच्चे कल्याणकी भावना है वे सब कांग्रेसकी सेवाओंका उपयोग कर सकते हैं। कांग्रेसजन इसका ध्यान रखेंगे कि किसान जमी-दारोंके प्रति अपना कर्तव्य विवेकपूर्वक पूरा करें। मेरा मतलब जरूरी तौर पर कानून द्वारा तय किये गये कर्तव्योंसे नहीं बल्कि उन कर्तव्योंसे है जिन्हें खुद किसानोंने उचित ठहराया है। उन्हें यह सिद्धान्त स्वीकार कर लेना चाहिये कि उनकी जमीनें केवल उन्हीं की हैं और जमींदारोंका उन पर कोई हक नहीं है। वे उस संयुक्त परिवारके सदस्य हैं या उन्हें होना चाहिए जिसका मुखिया जमींदार है जो इस बातका ध्यान रखता है कि उनके अधिकारोंका कोई अपहरण न करे। कानून भले कुछ भी हो जमींदारीका बचाव तभी किया जा सकता है जब यह संयुक्त परिवारकी स्थिति प्राप्त कर ले।

यंग इंडिया २८–५–३१

जमींदार और तालुकेदार

वर्णाश्रमके भयंकर ह्रासका ही यह परिणाम है कि तथाकथित क्षत्रिय अपनी रिआयासे पूरा कर्ज समझता है और उसकी गरीब रिआया विरासतमें मिले हुए अपने हककेवलको नजराना करने साध्यके रूपमें मान लेती है। मगर भारतीय समाजको शान्तिपूर्ण तरीकेसे सच्ची प्रगति करना है तो धनिक जमींदार-वर्गको यह निश्चित रूपसे मानना होगा कि रिआयामें भी वही आत्मा है जो उनके भीतर है और यह कि अपने धनके कारण वे गरीब रिआयासे ऊंचे नहीं हो जाते। जापानी सामन्तों और जमींदारोंकी तरह उन्हें खुदको ट्रस्टी मानना चाहिये जो अपनी रिआयाके कल्याणके लिए अपने पास धन-दौलत रखते। फिर वे अपने परिश्रमके लिए कमी-शनके रूपमें उचित रकम ही लें उससे थोड़ी भी ज्यादा नहीं। आज तो धनिक जमींदारोंके बिलकुल अनावश्यक ठाटबाट और फिजूलखर्ची तथा रिआया — जिसके बीच जमींदार लोग रहते हैं — के आसपासके गन्दे वातावरण और उसकी भयंकर गरीबीके बीच कोई अनुपात ही नहीं है। इसलिए एक आदर्श जमींदार तुरन्त अपनी रिआयाके मौजूदा बोझका बहुत-कुछ हलका कर देगा वह अपनी प्रजाके घनिष्ठ सम्पर्कमें आयेगा उनकी

बस्तोंको जानेगा और उसमें निराशाकी जगह, जो आज उसे निर्जीव और निष्प्राण-सी बना रही है, आशाका संचार करेगा। अपनी रिआयाके सफाई और स्वास्थ्य-संबंधी अज्ञानसे उसे खुशी नहीं होगी। अपनी रिआयाकी जीवन-संबंधी जरूरतें पूरी करनेके लिए वह गरीब बन जायगा। अपनी देखरेखमें रहनेवाली रिआयाकी आर्थिक स्थितिका वह अध्ययन करेगा तथा स्कूल खोलेगा जिनमें वह काश्तकारोंके बच्चोंके साथ ही अपने बच्चोंको भी पढ़ायेगा। वह खुद रास्ते और पाखाने साफ करके अपनी प्रजाको उसके रास्ते और पाखाने साफ करना सिखायेगा। वह बिना किसी संकोचके अपने बगीचे रिआयाके लिए खोल देगा ताकि लोग छूटसे उनका उपयोग कर सकें। अपने आनन्दके लिए वह जो गैर-जरूरी इमारतें अपने कब्जेमें रखता है उनमें से ज्यादातरका अस्पताल, स्कूल या इसी तरहकी दूसरी सार्वजनिक संस्थायें स्थापित करनेमें उपयोग करेगा। अगर केवल पूंजीपति जमींदार-वर्ग समयको पहचानकर अपनी साधन-संपत्तिके ईश्वर-दत्त अधिकारका विचार बदल दे तो बहुत ही थोड़े समयमें हिन्दुस्तानके सात लाख घूरोंके ढेर — जिन्हें आज गांव कहा जाता है — शांति स्वास्थ्य और सुखके धाम बन जाय। मेरा यह पक्का विश्वास है कि अगर पूंजीपति जमींदार जापानके जमींदार-वर्गका (जिसने राष्ट्र-निर्माणकी नई व्यवस्थामें अपनी जमींदारी और उससे संबंधित सारे विशेष अधिकार स्वेच्छासे छोड़ दिये थे) अनुसरण करें तो उन्हें कुछ खोना नहीं पड़ेगा बल्कि लाभ ही लाभ होगा। आज तो उनके सामने दो ही रास्ते खुले हैं। या तो वे स्वेच्छासे अपनी आवश्यकतासे ज्यादा दौलत और साज-सामान भोगका त्याग करें और सबको सच्चे सुखका उपभोग करने दें या समय रहते न चेतनेके कारण फैलनेवाली अराजकताका सामना करें, जिसमें लाखों आवास-रहित अज्ञान व भूखों मरनेवाले लोग देशको डुबो देंगे और जिसे शक्तिशाली सरकारकी सशस्त्र सेना भी रोक नहीं सकेगी। मैंने यह आशा की है कि भारत अन्तमें इस सर्वनाशको टाल सकेगा। यू. पी. के कुछ जमींदार ताल्लुकेदारोंके घनिष्ट सम्पर्कमें आनेका मुझे जो मौका मिला उसने मेरी इस आशाको मजबूत बनाया है।

यंग इंडिया ५-१२-'२९

आर्थिक समानता

आर्थिक समानता अर्थात् जगतके सब मनुष्योंके पास एक समान सम्पत्तिका होना जिससे वे अपनी कुदरती आवश्यकतायें पूरी कर सकें। कुदरतने ही अगर एक आदमीका हाजमा कमजोर बनाया हो और वह केवल पांच ही तोला अन्न खा सके और दूसरेको बीस तोला अन्न खानेकी आवश्यकता हो तो दोनोंको अपनी-अपनी पाचन-शक्तिके अनुसार अन्न मिलना चाहिये। सारे समाजकी पुनर्रचना इस आधार पर होनी चाहिये। अहिंसक समाजका दूसरा कोई आदर्श हो ही नहीं सकता। पूर्ण आदर्श तक हम कभी पहुंच नहीं सकते लेकिन उसे नजरमें रखकर हम विधान बनायें और व्यवस्था करें। जिस हद तक हम इस आदर्शको पहुंच सकेंगे उसी हद तक सुख और संतोष प्राप्त करेंगे और उसी हद तक सामाजिक अहिंसा सिद्ध हुई कही जायगी।

इस आर्थिक समानताके धर्मका पालन एक व्यक्ति भी कर सकता है। दूसरोंके साथकी उसे आवश्यकता नहीं रहती। अगर एक आदमी इस धर्मका पालन कर सकता है तो जाहिर है कि एक मंडल भी कर सकता है। यह कहनेकी जरूरत इसलिए है कि किसी भी धर्मके पालनमें जहां तक दूसरे उसका पालन न करें, वहां तक हमें रुके रहनेकी आवश्यकता नहीं। फिर भी आदर्शकी आखिरी हद तक न पहुंच सकें वहां तक कुछ भी त्याग न करनेकी वृत्ति बहुधा देखनेमें आती है। यह भी हमारी गतिको रोकती है।

अब हम इसका विचार करें कि अहिंसाके जरिये आर्थिक समानता कैसे लाई जा सकती है। पहला कदम यह है जिसने इस आदर्शको अपनाया हो वह अपने जीवनमें आवश्यक परिवर्तन करे। हिन्दुस्तानकी गरीब प्रजाके साथ अपनी तुलना करके अपनी आवश्यकतायें कम करे। अपनी धन कमानेकी शक्तिको अंकुशमें रखे। जो धन कमाये उसे ईमानदारीसे कमाये। सट्टेकी वृत्ति हो तो उसका त्याग कर दे। घर भी अपनी सामान्य आवश्यकतायें पूरी करने लायक ही रखे और जीवनको हर तरहसे संयमी बनावे। अपने जीवनमें जो सुधार संभव हों उन्हें

करके अपने मिलने-जुलनेवालों और पड़ोसियोंमें समानताके आदर्शका प्रचार करे।

आर्थिक समानताकी जड़में धनिकका ट्रस्टीपन निहित है। इस आदर्शके अनुसार धनिकको अपने पड़ोसीसे एक कौड़ी भी ज्यादा रखनेका अधिकार नहीं। तब क्या उसके पास जो ज्यादा है, वह उससे छीन लिया जाय? ऐसा करनेके लिए हिंसाका आश्रय लेना पड़ेगा। और हिंसाके जरिये ऐसा करना संभव हो तो भी समाजको उससे कोई लाभ होने वाला नहीं है। क्योंकि धन इकट्ठा करनेकी शक्ति रखनेवाले एक आदमीकी शक्तिको समाज खो बैठता है। इसलिए अहिंसक मार्ग यह हुआ कि जितनी उचित मानी जा सके उतनी अपनी आवश्यकतायें पूरी करनेके बाद जो *पैसा बाकी बचे उसका वह प्रजाकी ओरसे ट्रस्टी बन* जाय। अगर वह प्रामाणिकतासे संरक्षक बने तो जो पैसा पैदा करेगा उसका सद्व्यय भी करेगा। जब मनुष्य अपनेको समाजका सेवक मानेगा समाजके खातिर धन कमायेगा और समाजके कल्याणके लिए उसे खर्च करेगा तब उसकी कमाईमें शुद्धता आयेगी। उसके साहसमें भी अहिंसा होगी। इस प्रकारकी कार्यप्रणालीका आयोजन किया जाय तो समाजमें *बगैर संघर्षके मूक क्रांति पैदा हो सकती है।*

कोई पूछ सकते हैं कि इस प्रकार मनुष्य-स्वभावमें परिवर्तन होनेका उल्लेख इतिहासमें कहीं देखा गया है? व्यक्तियोंमें तो ऐसा हुआ ही है। किन्तु बड़े पैमाने पर समाजमें परिवर्तन हुआ है यह शायद सिद्ध न किया जा सके। इसका अर्थ इतना ही है कि व्यापक अहिंसाका प्रयोग आज तक नहीं किया गया। हम लोगोंके हृदयमें इस झूठी *मान्यताने घर कर लिया है कि अहिंसा व्यक्तिगत रूपसे ही विकसित* की जा सकती है और वह व्यक्ति तक ही मर्यादित है। लेकिन दरअसल बात ऐसा नहीं [illegible] अहिंसा सामाजिक धर्म है और सामाजिक धर्मके तौर पर [illegible] विकसित की जा सकती है। [illegible] विश्वास करानेके लिए [illegible] प्रय[illegible] और [illegible]। यह नई चीज है इसीलिए इसे [illegible] समझकर [illegible] बात इस युगमें तो कोई नहीं करेगा। यह कठिन है इसलिए अशक्य है, ऐसा भी इस युगमें कोई नहीं कहेगा।

क्योंकि बहुतसी चीजें अपनी आंखोंके सामने नई-पुरानी होती हमने देखी हैं जो असम्भव लगता था उसे सम्भव बनते हमने देखा है। मेरी यह मान्यता है कि अहिंसाके क्षेत्रमें इससे बहुत ज्यादा शोध सम्भव है और विविध धर्मोंके इतिहास इस बातके प्रमाणोंसे भरे पड़े हैं। समाजमें से धर्मको निकालकर फेंक देनेका प्रयत्न बांझके घर पुत्र पैदा करने जितना ही निष्फल है और अगर कहीं सफल हो जाय तो समाजका उसमें नाश है। धर्मके रूपान्तर हो सकते हैं। उसमें निहित प्रत्यक्ष वहम सड़ांध और अपूर्णतायें दूर हो सकती हैं हुई हैं और होती रहेंगी। मगर धर्म तो जब तक जगत है तब तक चलता ही रहेगा क्योंकि धर्म ही जगतका एकमात्र आधार है। धर्मकी अन्तिम व्याख्या है ईश्वरका कानून। ईश्वर और उसका कानून अलग-अलग चीजें नहीं हैं। ईश्वर अर्थात् अचल जीता-जागता कानून। कोई उसका पार नहीं पा सकता। मगर अवतारों और पैगम्बरोंने तपस्या करके उसके कानूनकी कुछ कुछ झांकी दुनियाको कराई है।

किन्तु महाप्रयत्न करने पर भी धनिक संरक्षक न बनें और भूखों मरते हुए करोड़ोंको और ज्यादा कुचलते जायं तब क्या करें? इस प्रश्नका उत्तर ढूंढनेमें ही अहिंसक कानून भंग प्राप्त हुआ। कोई धनवान गरीबोंके सहयोगके बिना धन नहीं कमा सकता। मनुष्यको अपनी हिंसक शक्तिका भान है। क्योंकि वह तो उसे लाखों वर्षोंसे विरासतमें मिली हुई है। जब उसे चार पैरकी जगह दो पैर और दो हाथवाले प्राणीका आकार मिला तब उसमें अहिंसक शक्ति भी आई। हिंसक शक्तिका तो उसे शुरूसे ही भान था। मगर अहिंसक शक्तिका भान भी धीरे-धीरे किन्तु अचूक रीतिसे रोज रोज बढ़ने लगा। यह भान गरीबोंमें फैल जाय तो वे बलवान बनें और आर्थिक असमानताको जिसके वे शिकार बने हुए हैं अहिंसक तरीकेसे दूर करना सीख लें।

असहयोग और सविनय कानून भंगके बारेमें मुझे कुछ लिखनेकी आवश्यकता है क्या? इन्हें हरिजन पत्रका कौन पाठक नहीं जानता?

हरिजनसेवक २४–८–४

अहिंसक साधन

गन्दे साधनोंसे मिलनेवाली चीज भी गन्दी ही होगी। इसलिए राजाको मारकर राजा और प्रजा एकसे नहीं बन सकेंगे। मालिकका सिर काटकर मजदूर मालिक नहीं बन सकेंगे। कोई असत्यसे सत्यको नहीं पा सकता। सत्यको पानेके लिए हमेशा सत्यका ही आचरण करना होगा। क्या अहिंसा और सत्यकी जोड़ी है? हरगिज नहीं। सत्यमें अहिंसा छिपी हुई है और अहिंसामें सत्य। एकको दूसरेसे अलग नहीं किया जा सकता। इसीलिए मैंने कहा है कि सत्य और अहिंसा एक ही सिक्केके दो पहलू हैं। दोनोंकी कीमत एक ही है। केवल पढ़नेमें ही फर्क है। एक तरफ अहिंसा है दूसरी तरफ सत्य। पूरी पवित्रताके बिना अहिंसा और सत्य निभ ही नहीं सकते। शरीर या मनकी अपवित्रताको छिपानेसे असत्य और हिंसा ही पैदा होगी।

इसलिए सत्यवादी अहिंसक और पवित्र समाजवादी ही दुनियामें या हिन्दुस्तानमें समाजवाद फैला सकते हैं।

हरिजनसेवक १३-७-'४७

अहिंसक अर्थ-रचना

[एक भाषणका अंश]

अहिंसा-परायण मनुष्यके सारे कामकाज और सारी प्रवृत्तियां अहिंसासे रंगी हुई होंगी। उसका धन्धा उसका व्यवसाय निश्चित रूपसे अहिंसक होगा। वैसे तो सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जाय तो बिना थोड़ी बहुत हिंसाके कोई भी काम या उद्योग-धन्धा संभव नहीं है। कुछ न कुछ हिंसा किये बिना जीना भी संभव नहीं है। हमारा काम तो यही रहता है कि ऐसी हिंसाकी मात्रा घटाकर कमसे कम कैसे की जाय। अहिंसा शब्द भी नकारात्मक है यानी यह जीवनमें अनिवार्य हिंसाका छोड़नेके प्रयत्नका सूचक है। इसलिए जिसकी अहिंसामें श्रद्धा है वह ऐसे ही उद्योग-धन्धेमें लगेगा जिसमें कमसे कम हिंसा होगी। उदाहरणके लिए हम यह कल्पना नहीं कर सकते कि अहिंसामें विश्वास

लेकिन ऐसे अन्यायकी संभावना इसमें कमसे कम रहती थी। मैं आठ बरससे पहलेके काठियावाड़के लोक-जीवनकी बात आपको बता रहा हूँ जिसका मुझे निजी अनुभव है। आज हम लोगोंमें देखते हैं उससे उस जमानेके लोगोंकी आंखोंमें ज्यादा तेज और उनके हाथ-पांवोंमें ज्यादा शक्ति और फुर्ती दिखाई देती थी।

इन उद्योग-धन्धोंमें शरीर-श्रम मुख्य चीज थी। विशाल यन्त्रो-द्योग उस समय नहीं थे। क्योंकि जब मनुष्य हाथसे जोत सके उतनी ही जमीनसे सन्तोष मानता हो तब वह दूसरेका शोषण नहीं कर सकता। हाथ-उद्योगोंमें गुलामी और शोषणकी गुंजाइश ही नहीं है। विशाल यन्त्रोद्योग एक मनुष्यके हाथमें धनके ढेर इकट्ठे करते हैं। जिसके बल पर वह अनेक लोगोंसे अपने लिए कड़ी मेहनत कराता है। अपने मजदूरोंके लिए आदर्श स्थिति पैदा करनेकी भी चाहे वह कोशिश करता होगा फिर भी उसमें अन्याय और शोषण तो रहता ही है। और उसका अर्थ अमुक रूपमें हिंसा ही है।

जब मैं यह बात कहता हूँ कि उस जमानेमें समाज दूसरोंके शोषण पर नहीं किन्तु न्याय पर रचा गया था तब मैं इतना ही बताना चाहता हूं कि सत्य और अहिंसा ऐसे गुण नहीं हैं जिन्हें केवल व्यक्ति ही सिद्ध कर सकता है बल्कि सारी जातियां और मानव-समाज भी उन पर अमल कर सकते हैं। जो गुण केवल मठ या कुटियामें ही खिल सकता है या व्यक्ति ही जिसका विकास कर सकते हैं, उसे मैं गुण ही नहीं मानता। मेरी नजरमें ऐसे गुणकी कोई कीमत नहीं है।

हरिजनसेवक १-९-४

बोझा ढोनेवाली दो गाड़ियों पर रु. १-६-० फी गाड़ीके हिसाबसे कुल रु. २-१२-० खर्च होगा। एक बैलगाड़ी एक दिनमें ७ से ८ गाड़ी तक खाद लादकर गाँवसे खेत तक जो लगभग आधे मील पर होता है, ले जा सकती है। इसमें रु. १-६-० + १ आने गाड़ीको भरने व खाली करनेमें गाड़ीवानकी मदद करनेवाले अतिरिक्त व्यक्तिकी मजदूरीका खर्च पड़ेगा जब कि मोटर-लारी यह काम करे तो उसमें भी इससे कम खर्च नहीं पड़ेगा। हां बढ़िया पक्की सड़क हो और लगातार काफी लम्बी दूर तक वजन ले जाना हो तब जरूर मोटर-लारी बाजी मार ले जायगी और बैलगाड़ी सुख और आर्थिक दृष्टिसे अनुपयोगी मालूम पड़ेगी। बैलोंको लगातार लम्बी दूर तक भगाये ले जाना भी वाञ्छनीय नहीं है। क्योंकि इससे उनकी शक्ति और सामर्थ्य पर बहुत बुरा असर पड़ता है। मगर इतने पर भी रेलवे स्टेशनसे लेकर दूर-दूरके गाँवों तक बैलगाड़ियाँ मोटर-लारियोंके मुकाबलेमें रात दिन लम्बी दूरीका सफर तय करती हुई पाई जाती हैं। यह जरूर है कि इन बैलगाड़ियोंके बैलोंकी शारीरिक दशा दयनीय होती है, क्योंकि कमाईके अनुपातसे गाड़ी-मालिक उन्हें खानेको कम देते हैं। इस प्रकार मालको शीघ्रतासे ले जाने या आदमीके एक जगहसे दूसरी जगह जानेके महत्त्व पर विचार करें, तो सिर्फ धीमी चाल ही एक ऐसी चीज है जो बैलगाड़ीके विरुद्ध जाती है। मगर जो गाँववाले खाली वक्तमें कोई कमाई नहीं करते और जिनके लिए मोटरके कारण बचनेवाले समयका कोई महत्त्व नहीं है उन्हें तो यही सोचना चाहिये कि थोड़ी दूरका काम पैदल चलकर ही निकालें और लम्बे सफरके लिए बैलगाड़ीका इस्तेमाल करें। अगर कोई किसान अपनी खुदकी गाड़ी रखे और उसमें सफर करे, तो नकद पैसेके रूपमें उसे कोई रकम खर्च नहीं करनी पड़ेगी बल्कि अपने खेतमें पैदा हुई चीजें खिलाकर ही वह बैलोंसे काम लेगा। सच तो यह है कि किसान चारे व अनाजको ही अपना पेट्रोल गाड़ीको मोटर-लारी और बैलोंको

घाससे शक्ति उत्पन्न करनेवाला उसका एंजिन समझें। मशीनमें न तो घासकी खपत होगी और न उससे गोबर ही मिलेगा जो कि खादके लिए बड़ा उपयोगी है। गांवमें बैल तो रखने ही पड़ते हैं और घास भी हर हालतमें होती है। अगर गाड़ी भी रहे तो उसके कारण गांवके बढ़ई और लुहारका धन्धा चलेगा। और अगर गायको पालें तो वह कल्पतरुका काम देगी। वनस्पतियोंके तेलसे वह ठोस मक्खन या घी बनायेगी और साथ ही वह बैल पैदा करनेवाली मशीन भी होगी। इस प्रकार एक पथ दो काज सधेंगे।

मोटर-लारीका आक्रमण सफल हो या न भी हो। बुद्धिमान कार्यकर्ता इसके हानि-लाभका अध्ययन करके निश्चित रूपसे गाड़ीवालोंका पथप्रदर्शन करे तो यह समझदारीकी बात होगी। अब भी ईश्वर जानें जो कुछ लिखा है और जो दिखा सुझाई है उस पर सब ग्रामसेवकोंको विचार करना चाहिये और देखना चाहिये कि ऐसा करना कहां तक ठीक है।

हरिजनसेवक १—७—१७

मोटर-लारी बनाम बैलगाड़ी

गांवोंमें प्रचार-कार्य करनेके लिए मोटर-लारियां उपयोगी होंगी या बैलगाड़ियां — इस विषय पर अगस्तकी ग्रामोद्योग पत्रिका में एक सुन्दर तर्कपूर्ण लेख प्रकाशित हुआ है, जो नीचे उद्धृत किया जाता है

> हमसे पूछा गया है कि जिला बोर्ड और अन्य इसी प्रकारकी स्थानीय संस्थायें जो ग्रामोद्धारके लिए कुछ धनराशि अलग रखना चाहती हैं उस रकमको गांवोंमें विभिन्न प्रकारके प्रचार-कार्यके लिए मोटर-लारी खरीदनेमें लगायें तो कैसा हो। यह शुभ चिह्न है कि इस प्रकारकी संस्थायें ग्रामोंके प्रति अपनी जिम्मेदारी महसूस करने लगी हैं और गांवों और शहरों

तथा शिक्षितों और अशिक्षितोंके बीचकी मौजूदा खाईको पूरनेके लिए प्रयत्नशील हो रही है। यहां सवाल यह उठता है कि मोटर-लारियोंका जो एक रातमें कई गांवोंका चक्कर लगा सकती हैं इस कामको जल्दी करनेके लिए उपयोग किया जा सकता है या नहीं।

सब कार्योंमें विशेषकर उन कार्योंमें जो विशुद्ध ग्रामीणोंकी भलाईके लिए किये जाते हैं हमें यह देखना जरूरी है कि व्यय हुई धनराशि लौटकर गांवोंमें आती है या नहीं। जिला और स्थानीय बोर्ड लोगोंसे धन प्राप्त करते हैं अतः उन्हें ऐसी चीजें खरीदनी चाहिये जिनसे लोगोंमें धनका प्रचलन और तेजीसे हो। यदि जिला और स्थानीय बोर्ड लोगोंसे टैक्स आदिके रूपमें जो रुपया वसूल करते हैं उसे बाहर भेज दें तो इससे वहांके लोगोंकी गरीबी बढ़ेगी और इसका जिला और स्थानीय बोर्डोंके कोष पर अवश्य असर पड़ेगा।

कोई स्थानीय संस्था कुछ हजार रुपयोंसे अधिक धन ग्रामोद्धारके लिए अलग नहीं रखती। अगर वह इस प्रयोजनके लिए एक मोटर-लारी खरीदती है तो इसका अर्थ यह होता है कि वह ५   रुपये जिलेसे बाहर भेज देती है इसके सिवा टायरों आदिके स्थायी खर्चके साथ पेट्रोल आदि पर वह रोजाना जो खर्च करती है वह भी गांववालोंके पास लौटकर नहीं आता बल्कि बाहर ही जाता है। इस खर्चका स्पष्ट उद्देश्य गांववालोंकी बेकारी और भुखमरी है। किन्तु खेती स्वास्थ्य बालरक्षा और इसी प्रकारके अन्य विषयों पर कभी-कभी होनेवाले भाषण या ग्रामोफोन व रेडियो सुननेके लायक बन सकनेके लिए यह भारी खर्च उठाना पड़ता है जब कि उन्हें अपना और अपने परिवारका गुजारा केवल   रुपये माहवारमें करना पड़ता है। इस समय गांववालोंको सबसे अधिक जिन चीजोंकी जरूरत है वह है भोजन और काम। हम बाहरसे चीजें मंगाकर उन्हें कामसे वंचित कर रहे हैं और उनके मुकाबलेमें उन्हें भाषण मौखिक

फ़ैक्टरीके लेख और संगीत देते हैं जिसके लिए वे स्वयं खर्च करते हैं और हम अपनी पीठ ठोंकते हैं कि हम उनकी बेहतरीके लिए काम कर रहे हैं। क्या इससे ज्यादा बेहूदी और कोई बात हो सकती है?

अब तुलना कीजिये कि मोटर-लारीकी जगह बहुत नफ़रतसे देखी जानेवाली बैलगाड़ीका उपयोग किया जाय तो क्या होगा। इससे बहुत तड़कका शायद न मचे और न यह उतने ज़ोरसे ऐलान कर सके कि कुछ आश्चर्यकारक चीज दुनियामें गांवोंके लिए की जा रही है। लेकिन अगर हमें सिर्फ़ अभिनय करना और ढोल पीटना अभीष्ट नहीं है, बल्कि वास्तविक ठोस रचनात्मक कार्यकी ज़रूरत है तो हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि बैलगाड़ी मोटर-लारीसे ग्रामीणोंका कहीं अधिक भला कर सकती है। वह दूर-दूरके गांवोंमें पहुंच सकती है जहां मोटर लारीका जाना कठिन है। उसकी कीमत मोटर-लारीकी कीमतका बहुत छोटा भाग होनेके कारण उतनी ही रकममें कई बैलगाड़ियां खरीदी जा सकती हैं जो जिसेके कई ग्राम-समूहोंका भला कर सकती हैं। इस पर खर्च किया हुआ पैसा गांवके बढ़ई, लुहार और गाड़ीवालकी जेबमें जाता है। बैलगाड़ी भी देखनेके लायक चीज बनाई जा सकती है अगर उसे वैज्ञानिक तरीकेसे बनाया जाय और उसमें बढ़िया पहिये स्टीलकी हाल और धुरी वगैरा काममें लिये जायं। इस पर किया गया व्यय गांवमें से सम्पत्तिको बाहर ले जानेके बनिस्बत उस गांवकी ही और जोड़ेगा। मोटरकी तो वहां ज़रूरत समझी जा सकती है जहां किसी भी कामकी सफलताकी कसौटी कामका जल्दी होना माना जाय। मगर गांवोंमें प्रचारके लिए, जिसका उद्देश्य ग्रामीणोंकी बेहतरी है ऐसी किसी चीजकी ज़रूरत नहीं। इसके विपरीत धीमे और स्थायी उपाय अधिक फ़ायदेमन्द साबित होंगे। एक गांवसे दूसरे गांवमें भागनेके बनिस्बत एक ही गांवमें कुछ समय बिताना अधिक कारगर कहा जा सकता है। इसी प्रकार इससे मनुष्योंके जीवन तथा समस्यायें

अच्छी तरह समझी जा सकती है और उन समस्याओंको सुलझानेके लिए किया जानेवाला काम प्रभावात्मक हो सकता है।

इसलिए मोटर-लारियों और ग्रामकार्यका एक साथ चलना बहुत बेतुका मालूम होता है। हमें जरूरत है स्थिर रच-नात्मक प्रयत्नकी न कि बिजली जैसी तेज रफ्तार और ऊपरी तड़क-भड़ककी। हम स्थानीय बोर्डों और सार्वजनिक संस्थाओंको जो गांववालोंकी भलाईके कार्यमें वस्तुतः बहुत दिलचस्पी रखती हैं सलाह देंगे कि वे ग्रामोद्धारके कार्यको गांवकी बनी हुई चीजोंके इस्तेमालसे प्रारम्भ करें और उन हालतोंका अध्ययन करें जिनसे देशमें लगातार गरीबी बढ़ती जा रही है और उन्हें एक-एक करके हटानेमें अपनी सारी शक्ति लगा दें। जब ग्रामीण जीवनके लिए चारों तरफसे गहरे और खूब सोच-विचारकर प्रयत्न करनेकी जरूरत है तब ऐसे उपायों पर, जो एक रातमें ग्रामो-द्धारका चमत्कार दिखाना चाहते हैं सार्वजनिक धन खर्च करना उसका नाश ही करना है।

आशा है कि जो लोग ग्रामसेवाके कार्यमें दिलचस्पी रखते हैं वे बैलगाड़ीके पक्षमें दी हुई स्पष्ट दलीलों पर ध्यान देंगे। जो गांवोंकी भलाई करना चाहते हैं उन्हींके द्वारा गांवोंके पैसेका नाश हो यह बड़ी निर्दयताकी बात है।

हरिजनसेवक —९-१

गांवकी ओर

[ग्रामवासियोंके साथ हुई एक बातचीतसे]

बैल हमारे गांवोंमें हर जगह यातायातके साधन हैं जिसका जैसी अवस्था भी उनका इस क्षेत्रमें उपयोग कम नहीं हुआ है। रेल और मोटर गाड़ियां चल जाती हैं लेकिन सारे पहाड़ी रास्ते पर मैंने बैलोंको भारी सामान लदी हुई गाड़ियां खींचते देखा है। ऐसा लगता है कि यातायातका यह साधन मानो हमारे जीवन और सभ्यताका अंग बन

गया है। और अगर हमारी दस्तकारियोंकी सम्यताको जिन्दा रहना है तो बैलोंको जिन्दा रहना ही होगा।

आपको इस बातका पता लगाना चाहिये कि गावमें किसके ढोर सबसे अच्छे हैं और फिर इस बातकी खोज करनी चाहिये कि वह उन्हें इतनी अच्छी हालतमें कैसे रख सकता है। आप इसका पता लगायें कि गावमें किसकी गाय सबसे ज्यादा दूध देती है और यह जानें कि वह उसे किस तरह पालता और खिलाता है। आप गावके सबसे अच्छे बैल और सबसे अच्छी गायके लिए इनाम रख सकते हैं। आदर्श ढोरोंके बिना हमारे गाव आदर्श नही बन सकते।

हरिजन १५-९-'४

१०

ग्राम-स्वराज्य

पंचायत

पचायत हमारा बड़ा पुराना और सुन्दर शब्द है उसके साथ प्राचीनताकी मिठास जुड़ी हुई है। उसका शाब्दिक अर्थ है गांवके लोगो द्वारा चुने हुए पाच आदमियोंकी सभा। यह उस पद्धतिका सूचक है जिसके द्वारा भारतके बेशुमार ग्राम-लोकराज्योंका शासन चलता था। लेकिन ब्रिटिश सरकारने महसूल वसूल करनेके अपने कठोर तरीकेसे इन प्राचीन लोकराज्योंका लगभग नाश ही कर डाला है। वे इस महसूल-वसूलीके आघातको सह नही सके। अब कांग्रेस-जन गावके बड़े-बूढ़ोंको दीवानी और फौजदारी इन्साफकी सत्ता देकर इस पद्धतिको फिरसे जिलानेका अधूरा प्रयत्न कर रहे हैं। यह प्रयत्न पहले-पहल १९२१ में किया गया लेकिन वह असफल रहा। अब वह दुबारा किया जा रहा है। लेकिन अगर वह व्यवस्थित और सुन्दर ढगसे — मैं वैज्ञानिक तरीकेसे नही कहूगा — नही किया गया तो फिर असफल रहेगा।

नैनीतालमें मुझे बताया गया कि संयुक्त प्रान्तकी कुछ जगहोंमें स्त्रीके साथ होनेवाले बलात्कारके मामले भी तथाकथित पंचायतें ही चलाती हैं। मैंने अज्ञान या पक्षपातवाली पंचायतों द्वारा किये गये कुछ बेतुके और ऊटपटांग फैसलोंके बारेमें भी सुना। अगर यह सब सच हो तो बुरा है। ऐसी अनियमित और नियम-विरुद्ध काम करनेवाली पंचायतें अपने ही बोझसे दबकर खतम हो जायँगी। इसलिए मैं ग्राम सेवकोंके मार्गदर्शनके लिए नीचेके नियम सुझाता हूँ:

१ प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी लिखित इजाजतके बिना कोई पंचायत कायम न की जाय।

२ कोई भी पंचायत पहले-पहल ढिंढोरा पिटवाकर बुलाई गई सार्वजनिक सभामें चुनी जानी चाहिये।

३ तहसील कमेटी द्वारा उसकी सिफारिश की जानी चाहिये।

४ ऐसी पंचायतको फौजदारी मुकदमे चलानेका अधिकार नहीं होना चाहिये।

५ यह दीवानी मुकदमे चला सकती है अगर दोनों पक्ष अपने झगड़े पंचायतके सामने रखें।

६ किसीको पंचायतके सामने अपनी कोई बात रखनेके लिए मजबूर न किया जाय।

किसी पंचायतको जुर्माना करनेकी सत्ता नहीं होनी चाहिये उसके दीवानी फैसलोंके पीछे एकमात्र बल उसकी नैतिक सत्ता कड़ी निष्पक्षता और सम्बन्धित पक्षोंका स्वेच्छापूर्वक आज्ञा-पालन ही है।

८ गुनाह करनेवालोंका कुछ समयके लिए सामाजिक या दूसरी तरहका बहिष्कार नहीं होना चाहिये।

हरएक पंचायतसे यह आशा रखी जायगी कि वह:

(क) अपने गाँवमें लड़के-लड़कियोंकी शिक्षाकी तरफ ध्यान दे
(ख) गाँवकी सफाईका ध्यान रखे
(ग) गाँवकी दवा-दारूकी जरूरत पूरी करे
(घ) गाँवके कुओं या तालाबोंकी रक्षा और सफाईका काम करे

(ञ) तथाकथित अस्पृश्योंकी उन्नति और उनकी रोजाना जरूरतें पूरी करनेका प्रयत्न करे।

१ जो पंचायत बिना किसी सही कारणके अपने चुनावके छह महीनेके भीतर नियम ९में बताई गई शर्तें पूरी न करे, या दूसरी तरहसे गांववालोंकी सद्भावना खो दे या प्रांतीय कांग्रेस कमेटीको उचित मालूम होनेवाले किसी कारणसे निन्दाकी पात्र ठहरे उसे तोड़ दिया जाय और उसकी जगह दूसरी पंचायत चुन ली जाय।

शुरू-शुरूमें यह जरूरी है कि पंचायतको जुर्माना करने या किसीका सामाजिक बहिष्कार करनेकी सत्ता न दी जाय गांवोंमें सामाजिक बहिष्कार अज्ञान या अविवेकी लोगोंके हाथमें एक खतरनाक हथियार सिद्ध हुआ है। जुर्माना करनेका अधिकार भी हानिकारक साबित हो सकता है और अपने उद्देश्यको ही नष्ट कर सकता है। जहां पंचायत सचमुच लोकप्रिय होती है और नियम ९में सुझाये गये रचनात्मक कामके जरिये अपनी लोकप्रियताको बढ़ाती है वहां वह देखेगी कि उसकी नैतिक प्रतिष्ठाके कारण ही लोग उसके फैसलों और सत्ताका आदर करते हैं। और यही सबसे बड़ा बल है जो किसीके पास हो सकता है और जिसे कोई उससे छीन नहीं सकता।

यंग इंडिया २८-५-३१

औंधमें ग्राम-लोकशाही

नन्ही-सी रियासत औंधको कौन नहीं जानता? आमदनी और विस्तारमें तो वह बहुत ही छोटी है मगर औंध-नरेशने बिना मांगे अपनी प्रजाको पूर्ण स्वराज्यकी नियामत बख्श कर अपनी और अपने राज्यकी कीर्ति चारों तरफ फैला दी है। औंधके प्रधानमंत्री श्री अप्पासाहब पंतने एक सौ पृष्ठकी आकर्षक पत्रिका छपाई है जिसमें औंध राज्यके इस प्रयोगका वर्णन किया गया है। उसमें से मैं नीचेका भाग उद्धृत करता हूं

नये विधानकी नींव ग्राम्य प्रजातंत्र पर रखी गई है। हर गांवके प्रौढ़ मतदाता मिलकर पांच आदमियोंकी एक

पंचायत चुनते हैं। इन पांचमें से एकको पंचायत सर्वानुमतिसे अपना प्रमुख चुनती है। अगर पंचायत इस तरहसे एकमत न हो सके तो गांवकी सब बालिग जनता पंचायतमें से एकको अपना प्रमुख चुन लेती है। इस तरह गांवोंके एक समूहके प्रमुखोंकी मिलकर तालुका-पंचायत बनती है। ग्रामवालोंका रुपया कैसे खर्च किया जाय इसका फैसला तालुका-पंचायत अपनी बैठकोंमें करती है। तालुकेमें जितनी आमदनी हो, उसमें से आधी पंचायतको मिलती है। गांव अपने-अपने बजट खुद तैयार करते हैं और अपने प्रमुखोंके द्वारा तालुका-पंचायतके सामने पेश करते हैं। इन सब पर पंचायतमें बहस होती है और सारे तालुकेका बजट तैयार किया जाता है। जो रकम गांवोंके हिस्से आती है, उसे वे अपनी मरजीके मुताबिक खर्च कर सकते हैं। अभी तक यह खर्च ग्राम शिक्षा और सार्वजनिक सेवाके साधनों — इमारतों सड़कों वगैरा पर ही हुआ है।

ग्रामसभाके सदस्य न सिर्फ केन्द्रीय सरकारके कामकाजसे वाकिफ रहते हैं बल्कि गांवोंके रोजके कारोबारसे भी निकट सम्बन्ध रखते हैं। तालुका-पंचायतकी बैठकोंमें शामिल होनेके कारण वे तालुकेके दूसरे गांवोंके कारोबारसे भी परिचित होते हैं। इस तरह ग्रामसभाके सदस्योंको लगभग दिनके आठों घड़ी सेवाकार्यमें खर्च करने पड़ते हैं। वे सिर्फ नामके ही सदस्य नहीं होते कि चुनावोंमें खड़े हो जायं कुछ मुद्दोंको सामने रखकर चुनावमें जीत जायं और उसके बाद अगले चुनाव तक मजेमें लापरवाहीकी नींद सोते रहें। उन्हें हर रोज ग्रामवासियोंका सामना करना पड़ता है। विधानके अनुसार ग्रामवासियोंको यह अधिकार है कि वे जब चाहें ग्रामसभामें से अपने प्रतिनिधिको वापस बुला लें। ½ के बहुमतसे पंचायतका फिरसे चुनाव करनेकी मांग की जा सकती है।

पंचायतें अदालतका काम करती हैं। ग्रामवासीको फरियादकी सुनवाईके लिए न तो रुपया खर्च करना पड़ता है न

गांवके बाहर ही कहीं जाना पड़ता है और न ताल्लुकेके मुख्य कस्बे तक दौड़ लगानी पड़ती है। पंचायत वहींकी वहीं उनके मुकदमेका फैसला कर देती है। किसान गांवमें से अपने गवाह ला सकता है और कोई कठिन मुकदमा दरपेश हो जिसमें कानूनके बहुत पेंच-खम आते हों तो एक सब-जज गांवमें आ जाता है और पंचायतको मुश्किल हल करनेमें मदद करता है। सब-जज न सिर्फ पंचायतको कानून-शास्त्रीके नाते प्रौढ़ सलाह देता है बल्कि अकसर जब गांवकी गरीब प्रजाको अपने कानूनी हकोंकी खबर नहीं होती तो उनकी रहनुमाई भी करता है ताकि मुंशी अपना उल्लू सीधा करनेके लिए उन्हें उलटे रास्ते न लगा दें।"

इस सबका नतीजा यह है कि औंधमें न्याय कम खर्चसे शीघ्रतासे और अचूक रूपसे प्रजाको मिलता है। अभी दो ही ताल्लुकोंमें १९७ दीवानी और फौजदारी मुकदमे तय किये जा चुके हैं। ५ प्रतिशत फौजदारी और ७५ प्रतिशत दीवानी मुकदमोंमें कोई अपील नहीं किया गया। चूंकि साक्षी सब स्थानीय होते हैं उन्हें कुछ देना नहीं पड़ता। इस तरह रुपया और समय दोनोंकी बचत होती है। अधिकांश मुकदमोंके एक ही पेशीमें फैसले हुए। पेशीके समय गांवके सारे लोग आकर अदालतमें इकट्ठे हो जाते हैं इसलिए झूठ बहुत कम बोला जाता है। क्योंकि वह फौरन पकड़ा जाता है। इसी वजहसे बहुतसे मुकदमे कोर्टसे बाहर समझौते द्वारा भी तय हो जाते हैं। न्याय करनेकी यह क्रिया खुद ही एक जबरदस्त प्रौढ़-शिक्षा है।

७२ गांवोंमें ८८ पाठशालायें हैं। प्रौढ़ मताधिकारकी प्रणाली शुरू होनेके बाद प्रौढ़ जनताके १५ प्रतिशत लोग पढ़ना-लिखना सीख चुके हैं। बुनियादी तालीम और शारीरिक विकास पर भी पूरा-पूरा ध्यान दिया जाता है।

अगर अप्पासाहबने यहां इस प्रयोगके उजले पहलू पर प्रकाश डाला है तो उसकी कठिनाइयों और मुसीबतोंको भी नजर-अंदाज नहीं किया है। मगर मैं यहां उनकी चर्चा नहीं करता। क्योंकि वे तो इस

तरहके सारे प्रयोगोंमें हमेशा हुआ ही करती है। अगर लोकनेता अपनी श्रद्धा खो न दें तो ये सब कठिनाइयां अपने-आप हल हो जायगी।

हरिजनसेवक १७–८–'४

आजादी

आजादीसे मतलब है आम लोगोंकी आजादी, उन पर हुकूमत करनेवालोंकी आजादी नहीं। हाकिम आज जिन्हें अपने पांव तले रौंद रहे हैं, आजाद हिन्दुस्तानमें उन्हीं लोगोंकी मेहरबानी पर उन्हें रहना होगा। उनको लोगोंके सेवक बनना होगा और उनकी मरजीके मुताबिक काम करना होगा।

आजादी नीचेसे शुरू होनी चाहिये। हरएक गांवमें जमहूरी सल्तनत या पंचायतका राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी। इसका मतलब यह है कि हरएक गांवको अपने पांव पर खड़ा होना होगा — अपनी जरूरतें खुद पूरी कर लेनी होंगी, ताकि वह अपना सारा कारोबार खुद चला सके। यहां तक कि वह सारी दुनियाके खिलाफ अपनी हिफाजत खुद कर सके। उसे तालीम देकर इस हद तक तैयार करना होगा कि वह बाहरी हमलेके मुकाबलेमें अपनी हिफाजत या रक्षा करते हुए मर-मिटनेके लायक बन जाय। इस तरह आखिर हमारी बुनियाद व्यक्ति पर होगी। इसका यह मतलब नहीं कि पड़ोसियों पर या दुनिया पर भरोसा न रखा जाय या उनकी राजी-खुशीसे दी हुई मदद न ली जाय। खयाल यह है कि सब आजाद होंगे और सब एक-दूसरे पर अपना असर डाल सकेंगे। जिस समाजका हरएक आदमी यह जानता है कि उसे क्या चाहिये और इससे भी बढ़कर जिसमें यह माना जाता है कि बराबरीकी मेहनत करके भी दूसरोंको जो चीज नहीं मिलती है वह खुद भी किसीको नहीं लेना चाहिये, वह समाज जरूर ही बहुत ऊंचे दर्जेकी सभ्यतावाला होना चाहिये।

ऐसे समाजकी रचना सत्य और अहिंसा पर ही हो सकती है। मेरी राय है कि जब तक ईश्वर पर जीता-जागता विश्वास न हो

सत्य और अहिंसा पर चलना नामुमकिन है। ईश्वर या खुदा वह जिन्दा ताकत है, जिसमें दुनियाकी तमाम ताकतें समा जाती हैं। वह किसीका सहारा नहीं लेती और दुनियाकी दूसरी सब ताकतोंके खतम हो जाने पर भी कायम रहती है। इस जीती-जागती रोशनी पर, जिसने अपने दामनमें सब कुछ लपेट रखा है, मैं विश्वास न रखूँ तो मैं समझ न सकूँगा कि मैं आज किस तरह जिन्दा हूँ।

ऐसा समाज अनगिनत गांवोंका बना होगा। उसका फैलाव एकके ऊपर एकके ढंग पर नहीं बल्कि लहरोंकी तरह एकके बाद एककी शक्लमें होगा। जिन्दगी मीनारकी शक्लमें नहीं होगी जहां ऊपरकी तंग चोटीको नीचेके चौड़े पाये पर खड़ा होना पड़ता है। वहां तो समुद्रकी लहरोंकी तरह जिन्दगी एकके बाद एक घेरेकी शक्लमें होगी और व्यक्ति उसका मध्यबिन्दु होगा। यह व्यक्ति हमेशा अपने गांवके खातिर मिटनेको तैयार रहेगा। गांव अपने इर्दगिर्दके देहातके लिए मिटनेको तैयार होगा। इस तरह आखिर सारा समाज ऐसे लोगोंका बन जायगा जो उद्धत बनकर कभी किसी पर हमला नहीं करते बल्कि हमेशा नम्र रहते हैं और अपनेमें समुद्रकी उस शानको महसूस करते हैं जिसके वे एक जरूरी अंग हैं।

इसलिए सबसे बाहरका घेरा या दायरा अपनी ताकतका इस्तेमाल भीतरवालोंको कुचलनेमें नहीं करेगा बल्कि उन सबको ताकत देगा और उनसे ताकत पायेगा। मुझे ताना दिया जा सकता है कि यह सब तो खयाली तसवीर है इसके बारेमें सोचकर वक्त क्यों बिगाड़ा जाय? युक्लिडकी परिभाषावाला बिन्दु कोई इन्सान खींच नहीं सकता फिर भी उसकी कीमत हमेशा रही है और रहेगी। इसी तरह मेरी इस तसवीरकी भी कीमत है। इसके लिए इन्सान जिन्दा रह सकता है। अगरचे इस तसवीरको पूरी तरह बनाना या पाना मुमकिन नहीं है तो भी इस सही तसवीरको पाना या इस तक पहुंचना हिन्दुस्तानकी जिन्दगीका मकसद होना चाहिये। जिस चीजको हम चाहते हैं, उसकी सही-सही तसवीर हमारे सामने होनी चाहिये तभी हम उससे मिलती-जुलती कोई चीज पानेकी उम्मीद रख सकते हैं। अगर

हिन्दुस्तानके हरएक गांवमें कभी पंचायती राज कायम हुआ तो मैं अपनी इस तसवीरकी सच्चाई साबित कर सकूंगा, जिसमें सबसे पहला और सबसे आखिरी दोनों बराबर होंगे या यों कहिये कि न कोई पहला होगा न आखिरी।

इस तसवीरमें हरएक धर्मकी अपनी पूरी और बराबरीकी जगह होगी। हम सब एक ही आलीशान पेड़के पत्ते हैं। इस पेड़की जड़ हिलाई नहीं जा सकती, क्योंकि वह पाताल तक पहुंची हुई है। जबरदस्तसे जबरदस्त आंधी भी उसे हिला नहीं सकती।

इस तसवीरमें उन मशीनोंके लिए कोई जगह न होगी जो इन्सानकी मेहनतकी जगह लेकर चन्द लोगोंके हाथोंमें सारी ताकत इकट्ठा कर देती है। सुधरे हुए लोगोंकी दुनियामें मेहनतकी अपनी अनोखी जगह है। उसमें ऐसी मशीनोंकी गुंजाइश होगी जो हर आदमीको उसके काममें मदद पहुंचायें। लेकिन मुझे कबूल करना चाहिये कि मैंने कभी बैठकर यह सोचा नहीं कि इस तरहकी मशीन कैसी हो सकती है। सिलाईकी सिंगर मशीनका खयाल मुझे आया था। लेकिन उसका जिक्र भी मैंने यों ही कर दिया था। अपनी इस तसवीरको पूर्ण बनानेके लिए मुझे उसकी जरूरत नहीं।

हरिजनसेवक २८–७–'४६

पंचायत

शनिवारकी शामकी प्रार्थना समलका नामके गांवमें हुई। प्रार्थनाके बाद गांधीजीने कहा: मुझे बड़ी खुशी होती है कि आपने यहां पंचायत-घर बना लिया है। इसके लिए मैं आपको बधाई देता हूं। लेकिन अगर आपने यहां पंचायतका काम न किया, तो पंचायत-घरसे क्या फायदा? पुराने जमानेमें यूनान, चीन और अन्य दूरके देशोंसे मशहूर यात्री यहां आते थे। बड़ी-बड़ी तकलीफें उठाकर वे हमारे देशमें ज्ञान पानेके लिए आते थे। उन्होंने लिखा है कि हिन्दुस्तान एक ऐसा देश है जहां कोई चोरी नहीं करता, कोई दरवाजोंको ताला नहीं लगाता। लोग ईमानदार और उद्यमी हैं। सब लोग हरएकके

रहते हैं। यह बात करीब दो हजार वर्ष पुरानी है। उस समय सिर्फ चार जातियां थीं। आज तो इतनी हो गई कि क्या कहना। पंचायत घर बनाकर आपने अपने पर बड़ी जिम्मेवारी ले ली है। इस पंचायतको आप सुशोभित करें। यहां आपसमें झगड़ा तो होना ही नहीं चाहिये। अगर झगड़ा हो तो पंच उसे निपटा दें। एक साल बाद मैं आपसे पूछूंगा कि आपके यहांसे कोई कोर्टमें गया था या नहीं। अगर ऐसा हुआ तो माना जायगा कि पंचायतने अपना काम नहीं किया। पंच परमेश्वरका काम करते हैं। आपकी कोर्ट एक ही होनी चाहिये—वह है आपकी पंचायत। इसमें खर्च एक कौड़ीका नहीं और काम शीघ्रतासे हो जाता है। ऐसा होने पर न तो पुलिसकी जरूरत होगी और न मिलिटरीकी।

पंचायतको देखना है कि मवेशीको पूरा खाना मिलता है या नहीं। गाय आज पूरा दूध नहीं देती क्योंकि उसे पूरा खाना नहीं मिलता। आज दरअसल हिन्दू गायको काटते हैं मुसलमान या दूसरे कोई नहीं काटते। हिन्दू गायको अच्छी तरह रखते नहीं और आहिस्ता आहिस्ता उसका कत्ल करते हैं। यह ज्यादा बुरा है। गायको हिन्दुस्तानमें जितना कष्ट उठाना पड़ता है उतना और किसी देशमें नहीं।

इसी तरह आज जितना अन्न पैदा होता है उससे दुगुना अन्न पैदा हो यह देखना पंचायतका काम है। जमीनमें ठीक ढंगसे खाद देकर यह किया जा सकता है। मनुष्य और जानवरके मल और कचरेमें से सोनखाद तैयार हो सकता है जिससे जमीनकी उपज बढ़ेगी।

तीसरा सवाल आपको यह रखना है कि क्या यहांके सब लोग स्वस्थ हैं भीतर और बाहरसे स्वस्थ हैं। यहांके रास्तों पर थूक गोबर और कचरा बिलकुल नहीं होना चाहिये। मैं आशा करता हूं कि यहां सिनेमा-घर होगा ही नहीं। सिनेमासे हम काफी बुराई सीख सकते हैं। कहते हैं कि सिनेमा शिक्षणका साधन बन सकता है। यह होगा तब होगा लेकिन आज तो उससे बुराई ही हो रही है। आप देशी खेल-कूदको ही पसन्द करेंगे। मैं आशा रखता हूं कि आपके यहां शराब गांजा अफीम वगैरा नशीली चीजें नहीं होंगी। आप अपने यहांसे छूआछूतका भूत निकाल फेंकेंगे। यहां हिन्दू, मुसलमान सिक्ख

ईसाई वगैरा सब सगे भाइयोंकी तरह रहेंगे। यह सब आप कर लेंगे तो आप सच्ची आजादीका नमूना पेश करेंगे। सारा हिन्दुस्तान आपके आदर्श गांवको देखने आयेगा और उससे प्रेरणा लेगा।

हरिजनसेवक ४-१-'४८

पंचायत-राज

[एक भाषणकी रिपोर्टसे]

हिन्दुस्तानके सच्चे लोकराज्यमें शासनकी इकाई गांव होगा। अगर एक गांव भी पंचायत-राज चाहता है, जिसे अंग्रेजीमें रिपब्लिक कहते हैं तो कोई उसे रोक नहीं सकता। सच्चा लोकराज्य केन्द्रमें बैठे हुए बीस आदमियोंसे नहीं चल सकता। उसे हर गांवके लोगोंको नीचेसे चलाना होगा।

हरिजनसेवक १८-१-४८

११

गांवकी रक्षा

शान्ति-सेना

कुछ समय पहले मैंने ऐसे स्वयंसेवकोंकी एक सेना बनानेकी तजवीज रखी थी, जो दंगों — खासकर साम्प्रदायिक दंगोंको शान्त करनेमें अपने प्राणों तककी बाजी लगा दें। इसके पीछे विचार यह था कि यह सेना पुलिसकी ही नहीं, बल्कि फौज तककी जगह ले ले। यह बात बड़ी महत्त्वाकांक्षावाली मालूम पड़ती है। शायद यह असंभव भी साबित हो। फिर भी अगर कांग्रेसको अपनी अहिंसात्मक लड़ाईमें कामयाबी हासिल करनी हो, तो उसे ऐसी परिस्थितियोंका शान्तिपूर्वक मुकाबला करनेकी अपनी शक्ति बढ़ानी ही चाहिये।

इसलिए हम देखें कि जिस शान्ति-सेनाकी हमने कल्पना की है, उसके सदस्योंकी क्या योग्यताएं होनी चाहिये

१ शान्ति-सेनाका सदस्य पुरुष हो या स्त्री अहिंसामें उसका जीवित विश्वास होना चाहिये। यह तभी संभव है जब कि ईश्वरमें उसका जीवित विश्वास हो। अहिंसक व्यक्ति तो ईश्वरकी कृपा और शक्तिके बिना कुछ कर ही नहीं सकता। इसके बिना उसमें क्रोध भय और बदलेकी भावना न रखते हुए मरनेका साहस नहीं आयेगा। ऐसा साहस तो इस श्रद्धासे ही आता है कि सबके हृदयमें ईश्वरका निवास है और ईश्वरकी उपस्थितिमें किसी भी भयकी जरूरत नहीं है। ईश्वरकी सर्वव्यापकताके ज्ञानका यह भी अर्थ है कि जिन्हें विरोधी या गुंडे कहा जा सकता हो उनके प्राणोंका भी हम खयाल रखें। साम्प्रदायिक दंगोंके बीचमें पड़नेका यह विचार उस समय मनुष्यके क्रोधको शान्त करनेका एक तरीका है जब कि उसके अंदरका पशुभाव उस पर हावी हो जाय।

२ शान्तिके इस दूतमें दुनियाके सभी खास-खास धर्मोंके प्रति समान श्रद्धा होना जरूरी है। इस प्रकार अगर वह हिन्दू हो तो हिन्दुस्तानमें प्रचलित अन्य धर्मोंका आदर करेगा। इसलिए देशमें माने जानेवाले विभिन्न धर्मोंके सामान्य सिद्धान्तोंका उसे ज्ञान होना चाहिये।

३ आम तौर पर कहा जाय तो शान्तिका यह काम केवल स्थानीय लोगों द्वारा अपने-अपने मुहल्लोंमें ही किया जा सकता है।

४ यह काम अकेले या जत्थोंमें हो सकता है। इसलिए किसीको साथी-सािथयोंके लिए इन्तजार करनेकी जरूरत नहीं। फिर भी आदमी स्वभावतः अपनी बस्तीमें से कुछ साथियोंको ढूंढकर स्थानिक सेनाका निर्माण करेगा।

५ शान्तिका यह दूत व्यक्तिगत सेवा द्वारा अपनी बस्ती या किसी चुने हुए क्षेत्रमें लोगोंके साथ ऐसे सम्बन्ध स्थापित करेगा जिससे जब उसे बुरी स्थितियोंमें काम करना पड़े तो उपद्रवियोंके लिए वह बिलकुल ऐसा अजनबी न हो जिस पर वे शक करें या जो उन्हें नागवार मालूम पड़े।

६ यह कहनेकी तो जरूरत ही नहीं कि शान्तिके लिए काम करनेवालेका चरित्र ऐसा होना चाहिये जिस पर कोई अंगुली न उठा सके और वह अपनी निष्पक्षताके लिए मशहूर हो।

७ आम तौर पर दंगोंके आनेसे पहले तूफान आनेकी चेतावनी मिल जाया करती है। अगर ऐसे आसार दिखाई दें तो शांति-सेना आग भड़क उठनेका इन्तजार न करके तभीसे परिस्थितिको संभालनेका काम शुरू कर देगी जबसे उसकी संभावना दिखाई दे।

८ अगर यह आन्दोलन बढ़े तो कुछ पूरे समय काम करनेवाले कार्यकर्ताओंका इसके लिए रहना अच्छा होगा लेकिन यह बिलकुल जरूरी नहीं कि ऐसा हो ही। खयाल यह है कि जितने भी अच्छे स्त्री-पुरुष मिल सकें उतने रखे जायं। लेकिन वे तभी मिल सकते हैं जब कि स्वयंसेवक ऐसे लोगोंमें से मिलें जो जीवनके विविध कार्योंमें लगे हुए हों पर उनके पास इतना अवकाश हो कि अपने इलाकेमें रहनेवाले लोगोंके साथ वे मित्रताके संबंध पैदा कर सकें तथा वे सब योग्यतायें रखते हों जो कि शांति-सेनाके सदस्यमें होनी चाहिये।

९ इस सेनाके सदस्योंकी एक खास पोशाक होनी चाहिये जिससे कालान्तरमें उन्हें बिना किसी कठिनाईके पहचाना जा सके।

ये सिर्फ आम सुझाव हैं। इनके आधार पर हरएक केन्द्र अपना विधान बना सकता है।

हरिजनसेवक १८-६-३८

पुलिस-बलकी मेरी कल्पना

अहिंसक शासनमें भी एक मर्यादित हद तक पुलिस-बलके लिए स्थान होगा। यह मान्यता मेरी अपूर्ण अहिंसाका चिह्न है। पुलिसके बिना मैं काम चला सकूंगा यह कहनेकी मेरी हिम्मत नहीं वैसे कि यह कहनेकी हिम्मत है कि बिना फौजके मैं काम चला लूंगा। मैं जरूर ऐसी स्थितिकी कल्पना करता हूं जब पुलिसकी भी जरूरत नहीं होगी। पर इसका सच्चा पता तो अनुभवसे ही लग सकता है।

यह पुलिस आजकी पुलिससे बिलकुल भिन्न ही प्रकारकी होगी। उसमें अहिंसामें विश्वास रखनेवालोंकी भरती होगी। वे लोगोंके सेवक होंगे सरदार नहीं। लोग उनकी मदद करते होंगे और रोज-ब-रोज कम होते जानेवाले उपद्रवोंका वे आसानीसे मुकाबला कर सकेंगे। पुलिसके पास

कुछ दस्ते तो होंगे पर उनका उपयोग शायद ही कभी होगा। असलमें देखा जाय तो इस पुलिसको सुधारकके तौर पर समझना चाहिये। ऐसी पुलिसका उपयोग मुख्यतः चोर-डाकुओंको काबूमें रखनेके लिए ही होगा। अहिंसक शासनमें मजदूर-मालिकोंका झगड़ा क्वचित् ही होगा हड़तालें शायद ही होंगी। क्योंकि अहिंसक बहुमतकी प्रतिष्ठा स्वभावतः इतनी बड़ी हुई होगी कि समाजके मुख्य अंग इस शासनका आदर करनेवाले होंगे। साम्प्रदायिक झगड़े भी इस शासनमें नहीं होने चाहिये।

हरिजनसेवक २४–८–'४

अहिंसक सेनादल

एक बार मेरे सुझानेसे ही शान्तिदल कायम करनेकी कोशिशें हुई थी। लेकिन उनका कोई नतीजा नहीं निकला। उनसे इतना सीखनेको मिला कि शान्तिदल बड़े पैमाने पर काम नहीं कर सकते। बड़े-बड़े दलोंको चलानेके लिए सजा नहीं तो सजाका डर होना चाहिये और जरूरत मालूम होने पर सजा भी दी जानी चाहिये। ऐसे हिंसक दलमें आदमीके चाल-चलनको नहीं देखा जाता। उसके कद और डील-डौलको ही देखा जाता है। अहिंसक दलमें इसका ठीक उलटा होता है। उसमें शरीरकी जगह गौण होती है। शरीरी सब कुछ है यानी चरित्र सब कुछ है। ऐसे चरित्रवान आदमीको पहचानना मुश्किल है। इसलिए बड़े-बड़े शान्तिदल कायम नहीं किये जा सकते। वे छोटे ही होंगे। जगह-जगह होंगे हर गांव या हर मुहल्लेमें होंगे। मतलब यह कि जो जाने-पहचाने लोग हैं उन्हींकी टुकड़ियां बनेंगी। वे मिलकर अपना एक मुखिया चुन लेंगे। सबका दर्जा बराबर होगा। जहां एकसे ज्यादा आदमी एक ही तरहका काम करते हैं वहां उनमें एकाध ऐसा होना चाहिये जिसके हुक्मके मुताबिक सब कोई काम करें। ऐसा न हो तो मेलजोलके साथ सहयोगसे काम न हो सकेगा। दो या दोसे ज्यादा लोग अपनी-अपनी मरजीसे काम करें, तो मुमकिन है कि उनके कामकी दिशा एक-दूसरेसे उलटी हो। इसलिए जहां दो या दोसे ज्यादा दल हों वहां वे हिल-मिलकर काम करें तभी काम बन सकता है और उसमें कामयाबी हो सकती है।

इस तरहके शान्तिदल जगह-जगह हों तो वे आरामसे और आसानीसे दंगा-फसादको होनेसे रोक सकते हैं। ऐसे दलोंको अखाड़ोंमें दी जानेवाली सभी तरहकी तालीम देना जरूरी नहीं। उसमें से कुछ तालीम देना जरूरी हो सकता है।

सब शान्तिदलोंके लिए एक चीज सामान्य होनी चाहिये। शान्तिदलके हरएक मेम्बरका ईश्वरमें अटल विश्वास होना चाहिये। उसमें यह श्रद्धा होनी चाहिये कि ईश्वर ही सच्चा साथी है और वही सबका रक्षणहार है कर्ता है। इसके बिना जो शान्ति-सेनाएं बनेंगी मेरे ख्यालमें वे बेजान होंगी। ईश्वरको आप अल्लाहके नामसे पहचानें अहुरमज्द कहें यहोवा कहें चीता-बागला कामना कहें राम कहें रहमान कहें किसी भी नामसे पुकारें, मगर उसकी शक्तिका उपयोग तो आपको करना ही है। ऐसा आदमी किसीको मारेगा नहीं बल्कि खुद मरकर मृत्युको जीतेगा और जी जायगा।

जिस आदमीके लिए यह कानून एक जीती-जागती चीज बन जायगा उसको वक्तके मुताबिक अक्ल भी अपने-आप सूझती रहेगी।

फिर भी अपने तजुरबेसे यहां मैं कुछ नियम देता हूं

१ सेवक अपने साथ कोई भी हथियार न रखे।

२ वह अपने बदन पर ऐसी कोई निशानी रखे जिससे फौरन पता चले कि वह शान्तिदलका मेम्बर है।

३ सेवकके पास घायलों वगैराकी सार-संभालके लिए तुरन्त काम देनेवाली चीज रहनी चाहिये। जैसे पट्टी कैंची छोटा चाकू सुई वगैरा।

४ सेवकको ऐसी तालीम मिलनी चाहिये जिससे वह घायलोंको आसानीसे उठाकर ले जा सके।

५ जलती आगको बुझानेकी बिना जले या झुलसे आगवाली जगहमें जानेकी ऊपर चढ़ने और उतरनेकी कला सेवकमें होनी चाहिये।

६ अपने महल्लेके सब लोगोंसे उसकी अच्छी जान-पहचान होनी चाहिये। यह खुद ही एक सेवा है।

७. उसे मन ही मन रामनामका बराबर जप करते रहना चाहिये और इसमें माननेवाले दूसरोंको भी ऐसा करनेके लिए समझाना चाहिये।

कुछ लोग आलस्यकी वजहसे या झूठी श्रद्धाकी वजहसे यह मान बैठते हैं कि ईश्वर तो है ही और वह बिना मांगे मदद करता है, फिर उसका नाम रटनेसे क्या फायदा? हम ईश्वरकी हस्तीको कबूल करें या न करें, इससे उसकी हस्तीमें कोई कमी-बेशी नहीं होती, यह सच है। फिर भी उस हस्तीका उपयोग तो अभ्यासी ही कर पाता है। हरएक भौतिक शास्त्रके लिए यह बात सौ फी सदी सच है, तो फिर अध्यात्मके लिए तो यह उससे भी ज्यादा सच होनी चाहिये। फिर भी हम देखते हैं कि इस मामलेमें हम तोतेकी तरह रामनाम रटते हैं और फलकी आशा रखते हैं। सेवकमें इस सचाईको अपने जीवनमें सिद्ध करनेकी ताकत होनी चाहिये।

हरिजनसेवक ५-५-४६

१२

ग्रामसेवक

ग्रामसेवा

[गुजरात विद्यापीठके कार्यकर्ताओंके साथ हुई बातचीतसे]

ग्रामसेवकके जीवनका मध्यबिन्दु चरखा होगा। यह चिन्तन मैं करता ही रहता हूं कि गांवोंमें व्यापक और लाभदायक उद्योगके रूपमें तथा दरिद्रता दूर करनेवाले साधनके रूपमें चरखा किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है। अभी तो इस तरह चरखेकी हमारे जीवनमें ठीक-ठीक स्थापना हुई ही नहीं। खादीके मूलमें मेरी जो कल्पना है वह तो यह है कि खादी हमारे किसानोंके लिए अन्नपूर्णाका काम करेगी। वह उन्हें काम देगी। आज हमारे देशमें न तो उद्योग है न स्वावलम्बन। पैसा तो बाहरसे यहां अब जमा भी है। उद्योग और स्वावलम्बनको यदि देशमें पुनः लौटाना है तो यह केवल चरखेके द्वारा ही सम्भव है।

ग्रामसेवक गांवमें जाकर नियमपूर्वक चरखा चलाकर सूत ही नहीं कातेगा बल्कि अपनी जीविकाके लिए बसूला या हथौड़ा चलायेगा कुदाली या फावड़ा चलायेगा या हाथ-पैरसे जो भी मजदूरी कर सके करेगा। खाने-पीने और सोनेके लिए आठ घंटे निकालकर बाकीका उसका सारा समय किसी न किसी काममें लगा ही रहेगा। अपना एक मिनट भी वह बेकार न जाने देगा। काहिलीको न तो वह अपने पास फटकने देगा न दूसरोंके पास। लोगोंको वह यह बतलाता रहेगा कि भूखे तो मत मरना है, शरीरका पालन पोषण शारीरिक श्रमसे ही करना है। हमारे देशसे अगर यह आलस्य विदा न हुआ तो कितनी ही सुविधायें क्यों न मिलें लोग भूखों ही मरेंगे। जो अपने दो दाने खाता है, उसे चार दाने उपजानेका धर्म स्वीकार करना ही चाहिये। ऐसा न हुआ तो जनसंख्या चाहे कितनी ही कम हो जाय हमारी भुखमरीकी समस्या हल न होगी। और अगर ऐसा हो जाय इसे धर्म मान लिया जाय तो दूसरे करोड़ों मनुष्य भी हिन्दुस्तानमें पलने लगें।

इस तरह ग्रामसेवक उद्यमकी जीती-जागती मूर्ति होगा। वह कपास बोनेसे लेकर चुनने और बुनने तककी खादीकी सभी क्रियाओंमें निष्णात बनेगा और हमेशा उन्हें पूर्ण बनानेका ही विचार करता रहेगा। अगर वह इसे शास्त्र मानेगा तो वह उसे अरुचिकर नहीं लगेगा बल्कि ज्यों-ज्यों वह इसकी भारी संभावनाओंको समझेगा त्यों-त्यों रोजाना वह इससे नया आनन्द प्राप्त करेगा। इस प्रकार जिन सेवकोंने ग्रामसेवाके काममें रस लिया होगा वे गांवोंमें जायेंगे तो शिक्षकके रूपमें पर वहां खुद सीखनेवाले बनकर रहेंगे नित्य-नूतन शोध और साधना करते रहेंगे। मेरी कल्पना यह नहीं है कि वे १६ घंटे खादीके ही काममें लगे रहें बल्कि खादीके कामसे जितना समय उन्हें मिले उसमें वे गांवके चालू उद्योग-धंधोंकी खोज करें और उनमें दिलचस्पी ले तथा लोगोंके जीवनमें अपनेको ओतप्रोत कर दें। खादी या चरखेमें भले ही लोगोंको विश्वास न हो तो भी इन सेवकोंको वे मनुष्य तो समझेंगे ही और इनके जीवनसे उन्हें जो उपयोगी बातें मिलेंगी वे ग्रहण करेंगे। केवल किसानोंके कर्जकी समस्या हल करने जैसे अपनी शक्तिसे बाहरके कामोंमें हाथ नहीं डालेंगे।

गांवोंकी सफाई और स्वच्छता ग्रामसेवकका एक दूसरा मुख्य काम होगा। अपने रहनेके घर और आसपासकी जगहको वह ऐसी साफ-सुथरी रक्खेगा कि देखनेवालोंका दिल ही न भरेगा। पर जिस तरह वह अपने घर-आंगनको साफ रक्खेगा उसी तरह लोगोंके आंगन और सारे गांवमें सफाई करता रहेगा।

ग्रामसेवक गांवोंमें वैद्यराज या डॉक्टर बननेका लोभ नहीं करेंगे। ये ऐसे फन्दे हैं जिनसे बचना चाहिये। हरिजन-प्रवासमें मुझे एक ग्रामाश्रम देखनेका मौका आया। पर वहां मैंने जो देखा उससे बड़ा क्षोभ हुआ। आश्रमके व्यवस्थापक और कार्यकर्ताओंको मैंने खूब खरी-खोटी सुनाई। मैंने कहा, वाह, आपने यह खूब आश्रम बनाया! यहां तो आप एक आलीशान महल बनाकर बैठे हैं। इसमें दवाखाना भी खोल दिया। पास पड़ोसके गांवोंमें आपके स्वयंसेवक घर-घर दवायें बांटते फिरते हैं। आप मुझे बड़े गर्वसे कहते हैं कि नित्य दूर-दूरसे लोग दवा लेने हमारे आश्रममें आते हैं और हर माह १२ मरीजोंकी औसत हाजिरी रहती है। लोगोंको इस दवा-दारू देनेका काम आपका नहीं है। आपका काम तो उन्हें सफाई, स्वच्छता और आरोग्यके नियम सिखानेका है। स्वेच्छाचारी बनकर, गंदे रहकर और गांवको गंदा रखकर ये लोग बीमार पड़ें और आपका दवाखाना इन्हें दवाइयां दे यह तो ग्रामसेवा नहीं है। आपको तो गांववालोंको संयम और स्वच्छता सिखानी चाहिये जिससे बीमारी उनके पास फटकने ही न पावे। इस आलीशान इमारतको छोड़कर आप सामनेके झोंपड़ेमें जा बसें। यह मकान भाड़ेसे लोकल बोर्डको उठा दें। आपको मालूम होगा कि चंपारनमें हमारे पास कुनैन, अरंडीका तेल और आयोडीन यही दो-तीन दवायें रहती थीं। आरोग्य और सफाईकी बात ही ग्रामसेवकको लोगोंके दिलोंमें बिठानी है।

इसके बाद ग्रामसेवकको खास हरिजनोंकी सेवा करनी है। उसका घर हमेशा हरिजनोंके लिए खुला रहेगा। संकट और कठिनाईके समय स्वभावतः वे लोग उसके पास दौड़े आवेंगे। अगर गांववाले उस सेवकके घरमें हरिजनोंका आना-जाना पसन्द न करें और उसे अपनी बस्तीमें

निकाल बाहर कर दें या वह वहां रहकर हरिजन-सेवा न कर सके तो वह हरिजन-बस्तीमें ही जाकर बस जाय।

अब दो शब्द शिक्षाके बारेमें। बात असलमें यह है कि हाथके पहले बालककी आंख कान और जीभ काम करेगी। इसलिए इतिहास भूगोल आदि जो भी अध्यापक उन्हें पढ़ायेगा वह जबानी ही पढ़ायेगा। इसके बाद बच्चा वर्णमाला और बारहखड़ी पढ़ेगा और फिर अक्षर-चित्रोंके बनानेका अभ्यास करेगा। इसका पूरा-पूरा प्रयोग आपको करना चाहिये। मुझे लगता है कि लोगोंकी बुद्धि तक पहुंचकर उसे जाग्रत करनेका मेरा यह स्वाभाविक मार्ग सुगमसे सुगम है। लोगोंको हमें समझानेमें नहीं [illegible] है। अगर हमने उनसे यह कहा कि अक्षर-ज्ञानके बिना शिक्षा प्राप्त नहीं होगी तो वे उलटे ही रास्ते जायेंगे। बड़ोंको और बालकोंको इस प्रकारकी मौखिक ज्ञान देनेकी बात मेरी इस ग्राम-संगठनकी कल्पनामें मौजूद है। किन्तु कोई इसका यह अर्थ न करे कि मैं साक्षरताका विरोधी हूं। मैं तो अक्षर-ज्ञानका सदुपयोग चाहता हूं।

ग्रामसेवकका जीवन गांवके जीवनसे मेल खानेवाला होगा। वह साहित्यिक या ज्ञान-विलासी जीवन बिताकर गांववालोंको सच्ची शिक्षा नहीं दे सकता। उसके पास तो चरखा करघा बसूला हथौड़ा कुदाली फावड़ा वगैरा औजार होंगे। किताब पढ़नेमें वह कमसे कम समय देगा। लोग जब [illegible] मिलने आयें तो वे उसे पढ़े-बढ़े किताबोंके पन्ने उलटते न देखेंगे। उन्हें वह औजार चलाता हुआ ही मिलेगा। मनुष्य जितना खाता है उससे अधिक पैदा करनेकी शक्ति ईश्वरने उसे दी है। दुर्बलसे दुर्बल मनुष्य भी इतना पैदा कर सकता है। इसके लिए वह अपने बुद्धिबलका उपयोग करेगा। [illegible] वह कहेगा कि मैं आपकी सेवा करनेके लिए आया हूं पेटके लिए [illegible]। संभव है कि लोग उसका तिरस्कार करें। फिर भी [illegible] ध्यान रखना [illegible]। किसी जगह उसे [illegible] न [illegible] हरिजन [illegible]। उसने यदि [illegible] कर दिया है, तो हरिजन [illegible] उस [illegible] न होना चाहिये। पर जहां [illegible] न मिले वहां वह खुद कोई भी उद्योग करके अपनी

करने चाहिये। गाँववालोंको ऐसी सलाह देनी चाहिये कि बिना अधिक पूंजी लगाये वे कौनसा उद्योग कर सकते हैं और किस तरह अपने स्वास्थ्य और आर्थिक स्थितिको सुधार सकते हैं।

हरिजनसेवक, २९-१-१

पुरानोंकी जगह नये तरीके?

काफी अनुभवके बिना ग्रामसेवकोंको पुराने औजारों, पुराने तरीकों और पुराने नमूनोंमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। पुरानी मौजूदा भूमिकाको कायम रखकर अगर वे सुधारकी बात सोचेंगे तो सलामत रहेंगे। वे देखेंगे कि यही सच्चा अर्थशास्त्र है।

हरिजन, २९-१-१

एक ग्रामसेवकका प्रश्न

इस प्रश्नके जवाबमें कि क्या ग्रामसेवक दूध, फल और साग-भाजी ले सकता है जो गाँववाले नहीं खा सकते, गांधीजीने लिखा :

ग्रामसेवकको खास बात यह ध्यानमें रखनी चाहिये कि वह ग्रामवासियोंकी सेवा करनेके लिए ही गाँवमें गया है और वहां आहारकी तथा दूसरी ऐसी जरूरतकी चीजें लेनेका उसे अधिकार है, उसका धर्म है, जिनसे वह अपने शरीरमें इतना स्वास्थ्य और शक्ति बनाये रखे कि गाँवकी सेवा अच्छी तरह कर सके। यह सही है कि ऐसा करते हुए ग्रामसेवकको अपने रहनेके ढंग पर ग्रामवासियोंकी अपेक्षा कुछ अधिक खर्च करना पड़ेगा। पर मेरा ऐसा खयाल है कि ग्रामवासी ग्रामसेवककी जरूरी चीजोंको ईर्ष्याकी दृष्टिसे नहीं देखते। ग्रामसेवकका अन्तःकरण ही उसके आचरणकी कसौटी है। वह सबसे पहले स्वादके लिए कोई चीज न खावे, विलासितामें न पड़े और जब तक जागता रहे तब तक सेवाकार्यमें ही लगा रहे। फिर भी यह संभव है कि उसके रहन-सहन पर कोई टीका-टिप्पणी करे। पर उस आलोचना या निन्दाकी उसे कोई परवाह नहीं करनी चाहिये। मैंने जिस आहारकी सलाह दी है वह सब गाँवोंमें मिल सकता है। दूध आम तौर पर गाँवोंमें मिल जाता है और बेर, करौंदा, अमरूद वगैरा

जितने भी सगी-साथी वह चाहे उतने अपने गांवमें से चुन ले। वे सब उसकी निगरानीमें काम करेंगे पर सब गांवकी खास जिम्मेदारी तो उसी पर रहेगी।

हमें इस यन्त्र-युगके मोहपाशमें नहीं फंसना चाहिये। हम तो अपने शरीर-यन्त्रोंको पूर्ण और काम करने योग्य औजार बनावें और उनका अच्छेसे अच्छा उपयोग करें। यही आपका कर्तव्य कर्म है। इसीको लेकर आप हिम्मतके साथ आगे बढ़ें।

हरिजनसेवक २-११-३५

भयकी भावना

अनेक ग्रामसेवक इस बातसे बड़े भयभीत रहते हैं कि गांवोंमें अपने गुजर-बसरके लिए वे क्या करेंगे। उन्हें इस बातका बड़ा भय है कि अगर किसी संस्था या व्यक्तिसे उन्हें भत्ता न मिला तो गांवोंमें कोई काम करके तो वे अपना गुजारा शायद ही चला सकें। फिर अगर वे कहीं विवाहित हुए और कुटुम्बका भी भार उन पर हुआ तब तो उन्हें और भी ज्यादा चिन्ता होती है। लेकिन मेरी रायमें उनकी यह धारणा ठीक नहीं है। इसमें शक नहीं कि अगर कोई आदमी शहरी मनोवृत्तिके साथ गांवमें जाय और शहरकी ही तरह वहां भी अपना रहन-सहन रखना चाहे तब तो उसके लिए वहां अपने गुजारे-लायक कमाई करना असंभव ही है। उस हालतमें तो वह तभी उतनी कमाई कर सकता है जब कि साहूकारोंकी तरह वह ग्रामवासियोंका शोषण करे। लेकिन अगर कोई किसी एक गांवमें जा बसे और वहां गांववालोंकी तरह ही रहनेकी कोशिश करे तो अपने परिश्रम द्वारा अपना गुजर करनेमें उसे कोई दिक्कत नहीं होगी। उसे इस बातका विश्वास होना चाहिये कि जब वे ग्रामवासी भी किसी न किसी तरह अपने गुजारेके लायक कमा ही लेते हैं जो बारहों म[illegible] अवश्य पचके मारे मरें पर अपनी बुद्धिका उपयोग [illegible] आम मजदूर [illegible] कमा लेते हैं तो वह भी कमसे कम उतना तो कमा ही लेगा जितना कि औसतन् कोई ग्रामवासी कमा लेता है। और ऐसा करते हुए वह किसी ग्रामवासीकी रोजी भी नहीं मारेगा क्योंकि

गांवमें वह उत्पादक बनकर आयेगा न कि दूसरोंकी कमाई पर गुलछर्रे उड़ानेवाला (परोपजीवी) बनकर।

गांवमें जानेवाले ग्रामसेवकके साथ अगर उसका साधारण परिवार भी हो तो उसकी पत्नी तथा परिवारके अन्य व्यक्तियोंको चाहिये कि वे भी निरलसकी पूरी मशक्कत करें। यह तो नहीं कहा जा सकता कि गांवमें जाते ही कोई कार्यकर्ता गांववालोंकी तरह कड़ी मशक्कत करने लगेगा। लेकिन अगर वह अपनी झिझक और मदकी भावना छोड़ दे तो वह जरूर है कि अपनी मेहनतकी कमीकी पूर्ति वह बुद्धिमत्तापूर्वक काम करनेसे कर लेगा। जब तक कि गांववाले उसकी सेवाकी इतनी कद्र न करने लगें कि उसका सारा समय उनकी अधिकसे अधिक सेवामें ही लगने लगे तब तक उसे कोई ऐसा उत्पादक कार्य करते रहना चाहिये जिससे दूसरों पर बोझ पड़े बिना उसका खर्च चलता रहे। हां जब उसका सारा समय सेवामें ही लगने लगे तब वह उस अतिरिक्त उत्पत्तिमें से बतौर कमीशनके कुछ पानेका पात्र होगा जो कि उसके द्वारा प्रेरित उपायोंके फल-स्वरूप होने लगेगी। लेकिन ग्रामोद्योग-संघकी देखरेखमें जो ग्रामकार्य शुरू हुआ है उसका कुछ महीनोंका अनुभव तो यह जाहिर करता है कि गांव वालोंमें हमारी पैठ बहुत धीरे-धीरे होगी और कार्यकर्ताको गांववालोंके सामने अपने आचरणसे यह सिद्ध कर देना पड़ेगा कि श्रम और सदाचरणकी दृष्टिसे वह उनके लिए एक नमूना है। इससे उन्हें बड़ा सुन्दर पाठ मिलेगा और अगर कार्यकर्ता गांववालोंका सरपरस्त बनकर अपनी पूजा करानेके बजाय उन्हींमें से एक बनकर, अर्थात् उनके साथ हिल-मिलकर, रहेगा तो देर-अबेर उसका असर पड़े बिना नहीं रहेगा।

अब सवाल यह है कि जीविकाके लिए गांवमें कौनसा काम किया जाय? उसे और उसके घरवालोंको अपना कुछ न कुछ समय तो गांवकी सफाईमें लगाना ही होगा चाहे गांववाले इसमें उसकी मदद करें या न करें। और साधारण तौर पर दवा-दारूकी जो सीधी-सादी मदद वह कर सकता है वह भी करेगा ही। इतना तो हर कोई कर ही सकता है कि कुनैन या किसी तरहकी मामूली दवा बता दे, घाव या जखम धोकर साफ कर दे मैली आंखों व कानोंको धो दे और घाव पर साफ मरहम

रूगा है। मैं ऐसी किसी किताबकी खोजमें हूं जिसमें गांवोंमें हमेशा ही होनेवाली मामूली बीमारियोंके लिए सरलसे सरल उपाय और हिदायतें हों। क्योंकि कैसी भी हों ये दोनों बातें तो ग्रामकार्यका मूल अंग होंगी ही। लेकिन इनमें ग्रामसेवकका दो घटे रोजसे अधिक समय न लगना चाहिये। ग्रामसेवकके लिए आठ घंटेका दिन जैसी बात नहीं। ग्रामवासियोंके लिए वह जो श्रम करता है, वह तो प्रेमका श्रम है। अतः अपने गुजारेके लिए, इन दो घटोंके अलावा उसे कमसे कम आठ घंटे तो कमाने ही होंगे। यह ध्यान रखनेकी बात है कि चरखा-संघ और ग्रामोद्योग-संघने जो नई योजना बनाई है, उसके अनुसार तो सब तरहके श्रमका कमसे कम मूल्य या महत्त्व एकसा ही है। इस प्रकार जो पिंजारा अपनी पींजन पर एक बड़ा काम करके बोसित परिमाणमें रुई धुनकता है वह ठीक उतनी ही मजदूरी पावेगा जितनी कि उतने समयमें अर्थात् एक घंटे तक निश्चित परिमाणमें किये हुए कामके लिए किसी बुनकर, दर्जी या कागज बनाने वालेको मिलेगी। इसलिए ग्रामसेवक अपनी इच्छाके अनुसार कोई भी ऐसा काम कर सकता है, जिसे वह आसानीसे कर सके अलबत्ता यह खबरदारी हमेशा रखनी चाहिये कि काम ऐसा ही चुना जाय जिसके फलस्वरूप तैयार होनेवाला माल उसी गांवमें या उसके आसपासके इलाकेमें खप सके अथवा जिस मालकी सबको जरूरत हो।

इस बातकी जरूरत तो हरएक गांवमें है ही कि ऐसी कोई दूकान खुली हो जहांसे खाने-पीनेकी चीजें शुद्ध और वाजिब दामों पर मिल सकें। यह ठीक है कि दूकान चाहे कितनी ही छोटी हो फिर भी उसके लिए थोड़ी-बहुत पूंजी तो चाहिये ही। लेकिन जो कार्यकर्ता अपने कार्यक्षेत्रमें थोड़ा भी परिचित होगा उसकी ईमानदारी पर लोगोंका इतना विश्वास तो होगा ही कि दूकानके लिए थोड़ा थोक माल उसे उधार मिल जाय।

इस तरहके और उदाहरण देनेकी अब जरूरत नहीं। जो सेवक सतत निरीक्षणकी बुद्धिसे काम करेगा उसे नित-नई बातोंका पता लगता ही रहेगा और वह जल्दी ही यह जान लेगा कि उसे कौनसा ऐसा काम करना चाहिये जिससे उसका निर्वाह भी हो और जिन ग्रामवासियोंकी उस सेवा करनी है उनके लिए वह आदर्श भी उपस्थित कर सके। अतएव

उसे ऐसा कोई काम चुनना पड़ेगा जिससे ग्रामवासियोंका शोषण न हो और न उनके आरोग्य या नैतिकताको ही धक्का लगे बल्कि उन्हें अपने फुरसतके समयमें हुनर-उद्योगका कोई काम करके अपनी मामूली आम दनीमें कुछ वृद्धि करनेकी शिक्षा मिले। सतत निरीक्षणसे उसका ध्यान उन चीजोंकी ओर जायगा जो गांवोंमें अकारण ही बरबाद होती हैं — जैसे खेतोंमें फसलके साथ उग आनेवाले घासपात और दूसरी अपने-आप पैदा होनेवाली चीजें। बहुत जल्द उसे पता लग जायगा कि उनमें से बहुतसी तो बड़ी उपयोगी हैं। उनमें से खाने या अन्य उपयोगकी वनस्पतियोंका वह चुनाव कर ले तो गोया वह अपनी रोजी कमानेके बराबर ही होगा। मीराबहनने तरह-तरहके पत्थर गांवोंसे लाकर मुझे दिये हैं जो देखनेमें संगमरमरके जैसे सुन्दर लगते हैं और बड़े उपयोगी हैं। मुझे फुरसत मिली तो शीघ्र ही मैं मामूली औजारोंसे उन्हें तरह-तरहकी शकलोंमें बदलकर बाजारमें बेचने लायक बना दूंगा। काकासाहबने बांसकी सड़ी-गली खपचियोंका, जो निकम्मी समझकर जलाई जानेवाली थीं एक मामूली चाकूके सहारे कागज काटनेके चाकुओं और कलमोंके कम्मचोंमें परिणत कर दिया जिन्हें एक हद तक बाजारमें बेचा भी जा सकता है। मगनवाड़ीमें कुछ लोग फुरसतके समयका उपयोग रद्दी कागजोंसे जो एक तरफ कोरे होते हैं, लिफाफे बनानेमें करते हैं।

दरअसल बात यह है कि गांववाले अब बिलकुल निराश हो चुके हैं। किसी भी अजनबीको देखकर उन्हें यही खयाल होता है कि वह उनका गला दबाने और उनका शोषण करनेके लिए ही आया है। बुद्धि और श्रमका सम्बन्ध-विच्छेद हो जानेसे अर्थात् उनमें बुद्धिशक्ति न होनेसे उनकी विचारशक्ति कुंठित हो गई है। कामके समयका भी वे सर्वोत्तम उपयोग नहीं करते। ग्रामसेवकको चाहिये कि ऐसे गांवोंमें वह अपने हृदयमें प्रेम और आशा भरकर जाय। उस दृढ़ विश्वास आत्म-विश्वास होना चाहिये कि जहां विवेकहीनताका काम करके स्त्री-पुरुष सालमें छह महीने बेकार बैठे रहते हैं वहां वह पूरे साल विवेकपूर्वक काम करेगा तो निश्चय ही ग्रामवासियोंका विश्वासपात्र बन जायगा और उनके बीच परिश्रम करता हुआ ईमानदारीके साथ अपने निर्वाह लायक कमाई कर सकेगा।

लेकिन मेरे बालबच्चों और उनकी पढ़ाईका क्या होगा? यह बात ग्रामसेवाके इच्छुक कार्यकर्ता पूछते हैं। अगर बच्चोंको आधुनिक ढंगकी शिक्षा देनी हो, तो मैं कोई ऐसी बात नहीं बता सकता जो कारगर हो। हां अगर उन्हें स्वस्थ मजबूत ईमानदार और समझदार ग्रामवासी बनाना काफी समझा जाय जिससे कि जब चाहें तब वे गांवमें अपनी रोजी कमा सकें तो उन्हें सारी शिक्षा अपने मां-बापकी छत्रछायामें ही मिल जायगी और उसके साथ-साथ जैसे ही वे सोचने-समझने लायक उमरको पहुंचेंगे और अपने हाथ-पैरोंका ठीक-ठीक उपयोग करने लग जायेंगे वैसे ही अपने परिवारमें वे थोड़ी-बहुत कमाई भी करने लगेंगे। सुघड़ घरके समान कोई स्कूल नहीं हो सकता न ईमानदार और सदाचारी माता-पिताके समान कोई अध्यापक हो सकते हैं। आधुनिक माध्यमिक शिक्षा तो गांववालों पर एक बोझ है। उनके बच्चे कभी भी उसे ग्रहण नहीं कर सकेंगे। और ईश्वरकी कृपा है कि सुघड़ घरेलू शिक्षा उन्हें प्राप्त हो तो वे उससे महरूम भी हरगिज नहीं रहेंगे। ग्रामसेवक चाहे वह पुरुष हो या स्त्री अगर ऐसा न हो कि अपने घरको सुघड़ रख सके तो उसके लिए ग्रामसेवक बननेका अथवा विशेष अधिकार और सम्मान प्राप्त करनेकी आकांक्षा न रखना ही ठीक होगा।

हरिजनसेवक २३-११-४५

ग्रामसेवकोंके प्रश्न

कार्यकर्ताओंकी सभामें गांधीजीसे भाषणके लिए कहनेके बजाय कार्यकर्ताओंने उन्हें अपने प्रश्नोंकी एक सूची दे दी और उन पर प्रकाश डालनेकी उनसे प्रार्थना की।

इनमें पहला प्रश्न ग्रामसेवकोंके कर्तव्योंके बारेमें था। गांधीजीने कहा कि ग्रामसेवकका एकमात्र कर्तव्य यह है कि वह गांववालोंकी सेवा करे और वह उनकी सर्वोत्तम सेवा तभी कर सकता है जब वह ग्यारह व्रतोंको प्रकाशस्तम्भकी तरह सदा अपने सामने रखे। ये व्रत विनोबाजीके बनाये हुए दो पद्योंमें दी हुई हैं जिन्हें देशके अधिकांश आश्रमोंमें प्रार्थनाके समय रोज गाया जाता है

तीसरा प्रश्न शारीरिक श्रमके बारेमें था। इसके जवाबमें कहा गया कि गांवमें काम करनेवालेको यहां तक हो सके ज्यादासे ज्यादा शारीरिक श्रम करके गांववालोंको अपनी काहिली दूर करनेकी शिक्षा देनी चाहिये। वैसे तो वह हर तरहकी मेहनतका काम कर सकता है लेकिन मैला उठानेके कामको उसे तरजीह देना चाहिये। यह निश्चय ही उत्पादक श्रम है। कुछ कार्यकर्ताओंने कमसे कम आध घंटा पूर्णतः सफाई और उत्पादक-श्रममें ही समान पर जो जोर दिया है वह मुझे पसन्द है। और मैला उठानेका काम निश्चय ही इस तरहका है। यही हाल कताईका है क्योंकि बचत करना भी तो एक तरहसे कमाई ही है।

चौथा प्रश्न डायरी (रोजनामचा) रखनेके बारेमें था। गांधीजीका यह निश्चित मत है कि ग्रामसेवकको अपने समयके एक-एक मिनटका हिसाब देनेके लिए तैयार रहना चाहिये और सब समयके कार्यको स्पष्ट रूपसे अपनी डायरीमें अंकित करना चाहिये। सच्ची डायरी तो डायरी लिखनेवालेके मन और आत्माकी एक झांकी होती है। लेकिन यह जरूर है कि बहुतोंको अपनी मानसिक हलचलोंका सच्चा विवरण अंकित करना बहुत मुश्किल मालूम पड़ेगा। उस हालतमें वे अपनी शारीरिक हलचलोंको ही उसमें अंकित करें। लेकिन यह लापरवाहीके साथ नहीं होना चाहिये। खाली इस तरह लिख देनेसे काम नहीं चलेगा कि रसोईमें काम किया। इसके साथ निश्चित रूपसे यह भी लिखना होगा कि कबसे कब तक क्या क्या और किस तरह काम किया।

पांचवां प्रश्न दुबलों* के बीच काम करनेके सम्बन्धमें था जो गुजरातके कुछ हिस्सोंमें लगभग गुलामोंकी ही तरह काम करते हैं। दुबलोंकी सेवाका अर्थ गांधीजीने कहा यह है कि हम उनके दुःख-दर्दोंमें भागीदार बनें और उनके मालिकोंसे मिल-जुलकर इस बातका प्रयत्न करें कि वे उनके साथ न्याय और दयालुताका व्यवहार करें।

अन्तमें गांधीजीने कहा — ग्रामसेवकको राजनीतिसे अलग रहना चाहिये। वह कांग्रेसका सदस्य तो बन सकता है लेकिन चुनावकी हलचलमें

---

* गुजरातकी एक आदिवासी जाति।

इन पंक्तियोंको लिखते हुए मुझे उन कार्यकर्ताओंका स्मरण आ रहा है जिन्होंने सच्चरित्र और लगनीके अभावमें ग्रामीणोंके हितको तथा अपनेको भी नुकसान पहुंचाया है। सौभाग्यसे पुरुषरिक्तताकी स्पष्ट मिसालें बहुत कम हैं। किन्तु इस कार्यमें सबसे बड़ी रुकावट कार्यकर्ताओंकी ग्रामीण जीवनके स्तर पर अपने जीवनको ला सकनेकी अयोग्यता है। अगर प्रत्येक कार्यकर्ता अपने कामकी इतनी कीमत लगाने लगे जिसका बोझ ग्रामसेवा उठा न सके तो नतीजा यह होगा कि इन संस्थाओंको अपना कारोबार समेटना पड़ेगा।

थोड़ीसी अस्थायी अवस्थाओंको छोड़कर शहरोंके पैमाने पर तनख्वाहोंकी अदायगीका इसके सिवा कोई मतलब नहीं कि गांवों और शहरोंके बीचकी खाईको पाटा नहीं जा सकता। हमें इस तथ्यको अपनी आंखोंसे ओझल न कर देना चाहिये कि ग्राम-सुधारका आन्दोलन शहरियोंके लिए भी उतना ही शिक्षाकी वस्तु है जितना कि स्वयं ग्रामीणोंके लिए है। शहरसे आये कार्यकर्ताओंको ग्रामीण मनोवृत्ति अपनाकर उसके अनुसार ग्राम्य जीवन बितानेकी कला सीखनी चाहिये। इसका यह मतलब कभी नहीं कि वे भी ग्रामीणोंकी तरह भूखे रहने लगें। इसका तो सिर्फ इतना ही मतलब है कि उनके पुराने जीवनके ढंगमें मौलिक परिवर्तन होना चाहिये। जहां एक तरफ गांवोंके जीवनमानको ऊंचा उठानेकी जरूरत है वहां दूसरी तरफ शहरोंके जीवनमानको इस तरह नीचा करनेकी जरूरत है कि जिससे उनके स्वास्थ्य पर कोई बुरा असर न पड़े।

हरिजनसेवक ११-४-३६

ग्रामसेवक-विद्यालयके विद्यार्थियोंसे बातचीत

आज मुझे कहना तो तुम्हारे भावी कार्य और जीवनके आदर्शके विषयमें है। जिस अर्थमें आज अंग्रेजीका 'कैरियर' शब्द प्रचलित होता है वैसा 'कैरियर' बनानेको तुम यहां नहीं आये हो। आज तो लोग मनुष्यकी कीमत पैसेसे आंकते हैं और उसकी शिक्षा बाजारकी बिक्रीकी चीज बन गई है। मनमें यह भय लेकर अगर तुम लोग यहां

आये हो तब तो यह समझ लो कि तुम्हारे जीवनमें निराशा ही लिखी है। यहाँसे शिक्षा प्राप्त करके निकलोगे तो तुम्हें जो ? रु माहवार पारिश्रमिक तुम्हें मिलेगा अंत तक वही मिलता रहेगा। किसी बड़ी कोठीके मैनेजर या बड़े अफसरको जो तनख्वाह मिलती है, उसके साथ इसका मुकाबला न करना।

हम तो ये जाम्‌ पैमाने (स्टैण्डर्ड) ही बदल देते हैं। हम तुम्हें ऐसे किसी केरियर का वचन नहीं देते। सच्ची बात तो बल्कि यह है कि इस तरहकी अगर तुम्हारी महत्वाकांक्षा हो तो हम उससे तुम्हें बचा लेना चाहते हैं। आशा हम यह रखते हैं कि तुम्हारा भोजन खर्च १ रु मासिकके भीतर हो। एक आई सी एस का खाना खर्च शायद १ रु मासिक आयगा। पर इसका यह मतलब नहीं कि वह किसी तरह तुमसे शारीरिक शक्ति बुद्धि या नैतिकतामें बड़ा होगा। यह राजसी भोग भोगते हुए भी संभव है वह शारीरिक शक्ति बुद्धि या नैतिकतामें तुमसे कम हो। मैं जानता हूं कि तुम अपनी शक्तिको रुपये-पैसेके गजसे नापनेके लिए इस शिक्षण-शालामें नहीं आये हो। नगण्य सा निर्वाह खर्च लेकर देशको अपनी सेवा देनेमें ही तुम आनन्द अनुभव करते हो। शेयर बाजारमें एक मनुष्य भले हजारों रुपये कमाता हो पर वह हमारे इस कामके लिए बिलकुल निकम्मा साबित हो सकता है। वह मनुष्य हमारी सीधी-सादी परिस्थितिकी जगहमें आ जाय तो दुःखी ही होगा जिस तरह कि हम उसकी परिस्थितिकी जगहमें पहुंच जाय तो दुःखी होंगे।

देशके लिए हमें आदर्श मजदूरोंकी जरूरत है। वे इस चिन्तामें न पड़ें कि उन्हें खाने-पहननेको क्या मिलेगा या गांवोंके लोग उन्हें क्या क्या सुख-सुविधायें देंगे। अपनी आवश्यकताओंको वे श्रद्धापूर्वक ईश्वर पर छोड़ दें और इसमें उन्हें जो भी कठिनाइयां या दुःख सहने पड़ें उनमें भी वे सुख मानें। ० आज भारत जिस देशमें विचार करता है, वहां यह बात अनिवार्य है। हमें ऐसे वेतनभोगी सेवक नहीं चल सकते जिनकी नजर हमेशा वेतन-वृद्धि प्रोविडेण्ट फण्ड या पेंशन पर रहती है। हमारे लिए तो ग्रामवासियोंकी निष्काम सेवा ही सन्तोष है।

तुममें से कुछ लोगोंके मनमें यह प्रश्न उठ रहा होगा कि गांवोंके लोगोंके लिए भी क्या यही पैमाना है? निश्चय ही नहीं। यह तो हम सेवकोंके लिए है, हमारे स्वामी जो ग्रामवासी हैं उनके लिए नहीं। इतने बरसोंसे हम उनके ऊपर भाररूप बने हुए हैं। अब हम इसलिए अपनी इच्छासे गरीबी स्वीकारना चाहते हैं कि उनकी स्थिति कुछ सुधरे। हमें करना यह है कि आज वे जो कमाते हैं उसमें वे हमारे प्रयत्नसे कुछ वृद्धि कर सकें। ग्रामोद्योग संघका यही उद्देश्य है। मैंने जैसे सेवकोंका वर्णन किया है उनकी संख्या संघमें अगर बढ़ती न गई तो यह उद्देश्य सफल नहीं हो सकेगा। तुम सब इस प्रकारके ग्रामसेवक बनो।

हरिजनसेवक १ –५–३६

ग्रामसेवा

[ग्रामसेवक-शिक्षणालय वर्धाके विद्यार्थियोंके साथ हुई गांधीजीकी बातचीतसे।]

प्रश्न — गांवके लोग आपसे कभी मिलने आते हैं?

उत्तर — आते हैं पर कुछ डरते हुए-से और शायद थोड़ी शंका भी उनके मनमें रहती है। ग्रामवासियोंकी ये भी कमजोरियां हैं। उनकी ये कमजोरियां भी हमें दूर करनी होंगी।

प्र — यह आप कैसे करेंगे?

उ — धीरे-धीरे उनके दिलमें जगह करके हमें उनका यह भय और सन्देह दूर करना होगा कि हम उनसे जबरन् कोई काम कराने आये हैं। हम अपने रोजके मुहब्बतके बर्तावसे ही यह दिखा सकेंगे कि हमारा जबरदस्ती या स्वार्थ-साधनका कोई इरादा नहीं है। पर यह सब धीरजका काम है। तुम अपनी सचाई और ईमानदारीका एकाएक तो विश्वास नहीं जमा सकते।

प्र — क्या यह ठीक है कि जो लोग किसी संस्था या किसी गांवमें बगैर कोई पारिश्रमिक या वेतन लिये काम करते हैं वे ही जनताके विश्वासपात्र बन सकते हैं?

उ —नहीं मेरा ऐसा खयाल नहीं है। बेचारे गांववालोंको तो यह भी पता नहीं होता कि कौन वेतन लेकर काम कर रहा है और कौन नहीं। उनके ऊपर तो असलमें हमारी इन बातोंका असर पड़ता है कि हम किस ढंगसे रहते हैं हमारी आदतें कैसी हैं हम कैसी बातचीत करते हैं। यही नहीं हमारे हरएक भाव या चेष्टा तकका उनके ऊपर असर पड़ता है। शायद उनमें से कुछ लोग हम पर यह सन्देह करें कि हम *यहां रुपया-पैसा कमानेकी गरजसे काम कर रहे हैं* तो हमें उनका यह सन्देह भी दूर करना होगा। पर तुम यह बात दिलमें न जमा लेना कि जो किसी संस्था या गांवसे कुछ भी नहीं लेता वही आदर्श ग्रामसेवक है। ऐसा मनुष्य अकसर घमंडमें आकर अपनेको औरोंसे ऊंचा समझने लगता है जिससे उसका पतन हो जाता है।

प्र —आप हमें गांवके उद्योग-धंधे सिखा रहे हैं। इसका उद्देश्य क्या है? क्या ये धंधे हमारे जीविका कमानेके साधन होंगे या इन्हें हम गांवके लोगोंको सिखा सकेंगे? अगर गांवके लोगोंको सिखानेके लिए ही हमें ये विषय पढ़ाये जा रहे हैं तो एक सालमें हम इन उद्योग-धन्धोंमें निपुण कैसे हो सकते हैं?

उ —तुम्हें तो मामूली बातोंका ही ज्ञान कराया जा रहा है। क्योंकि जब तक तुम्हें यह जानकारी न होगी तब तक तुम अपनी सलाहसे लोगोंको मदद नहीं पहुंचा सकोगे। तुममें जो सबसे अधिक उत्साही और कर्मशील होंगे वे बेशक किसी एक धन्धेके जरिये अपनी रोजी कमा सकते हैं।

प्र —श्री राजगोपालाचार्यने उस दिन हमारे विद्यालयमें कहा था कि किसी उद्योगमें पूरी तरहसे कुशलता प्राप्त किये बगैर गांवमें जाना बेकार है। गांवोंमें जाकर तुम लोग उन्हें कोई उद्योग सिखाना चाहते हो तो तुम्हें उनसे अच्छे किसान अच्छे बुनकर और उनसे अच्छे चर्मकार वगैरा बननेकी जरूरत है।

उ —ठीक है। पर जो विषय यहां सिखाये जाते हैं वे ऐसे हैं कि उनसे तुम ग्रामवासियोंको कई बातोंका अच्छा ज्ञान करा सकते हो। आटा पीसनेकी चक्की चाल करनेकी जोतकी और घानीमें इनमें सुधार किये

है। हम अपने औजारोंमें सुधार करनेके प्रयोग कर रहे हैं। तुम सुधरे हुए औजारोंको गांवोंमें ले जा सकते हो। पर सबसे बड़ी बात जो हमें उन्हें सिखानी है वह है अपनी सचाई और ईमानदारी। अपने स्वार्थके लिए वे दूधमें घीमें तेलमें और अपनी रुई तकमें मिलावट कर देते हैं। पर यह उनका नहीं हमारा दोष है। हम इतने दिनों तक उनकी उपेक्षा और शोषण ही करते रहे। उन्हें कभी कोई अच्छी बातें हमने नहीं सिखाईं। अब उनके निकट सम्पर्कमें रहनेसे हम उनकी बुरी आदतोंको आसानीसे सुधार सकेंगे। हमारी इतनी लम्बी लापरवाही और मजबूरीसे उनकी बुद्धि और अंतरात्मा तक जड़ हो गई है। हमें उनकी इन जड़ शक्तियोंको फिरसे जाग्रत और अनुप्राणित करना है।

हरिजनसेवक २५–७–३६

एक देहातीके प्रश्न

वीरभूमिके एक नम्र देहाती ने जो शान्तिनिकेतनमें रहते हैं दीनबन्धु ऐण्ड्रूजके मारफत मेरे पास नीचे लिखे प्रश्न भेजे हैं

१ आपकी रायमें आदर्श भारतीय ग्रामकी कल्पना क्या है? और हिन्दुस्तानकी मौजूदा सामाजिक और राजनीतिक हालतमें आदर्श ग्राम के ढंग पर एक गांवका किस हद तक वास्तविक पुनर्निर्माण किया जा सकता है?

२ एक कार्यकर्ताको सबसे पहले गांवकी किन समस्याओंको हल करनेकी कोशिश करनी चाहिये और किस प्रकार उसे इसकी शुरुआत करनी चाहिये?

३ छोटे पैमाने पर ग्रामीण प्रदर्शिनियां या संग्रहालय बनाये जाय तो उनके खास-खास विषय क्या हों और गांवोंके पुनर्निर्माणमें इन प्रदर्शिनियोंका सबसे अच्छा उपयोग कैसे किया जाय?

१ आदर्श भारतीय गांव इस तरह बसाया और बनाया जाना चाहिये जिससे वह सम्पूर्णतया नीरोग हो सके। उसके झोंपड़ों और मकानोंमें काफी प्रकाश और वायु आ-जा सके। ये ऐसी चीजोंके बने हों जो पांच मीलकी सीमाके अन्दर उपलब्ध हो सकती हैं। हर मकानके आसपास

या आगे-पीछे इतना बड़ा आंगन हो जिसमें गृहस्थ अपने लिए साग भाजी लगा सकें और अपने पशुओंको रख सकें। गांवकी गलियाँ और रास्ता पर जहां तक हो सके धूल न हो। अपनी जरूरतके अनुसार गांवमें कुएं हों जिनसे गांवके सब आदमी पानी भर सकें। सबके लिए प्रार्थना-घर या मंदिर हों सार्वजनिक सभा वगैराके लिए एक अलग स्थान हो गांवकी अपनी गोचर-भूमि हो सहकारी ढंगकी एक गोशाला हो ऐसी प्राथमिक और माध्यमिक शालायें हों जिनमें औद्योगिक शिक्षा सर्वप्रधान वस्तु हो और गांवके अपने मामलोंका निपटारा करनेके लिए एक ग्राम-पंचायत भी हो। अपनी जरूरतोंके लिए अनाज साग-भाजी फल खादी वगैरा खुद गांवमें ही पैदा हों। एक आदर्श गांवकी मेरी अपनी यह कल्पना है। मौजूदा परिस्थितिमें उसके मकान ज्योंके त्यों रहेंगे सिर्फ यहां-वहां थोड़ासा सुधार कर देना अभी काफी होगा। अगर कहीं जमींदार हो और वह भला आदमी हो या गांवके लोगोंमें सहयोग और प्रेमभाव हो तो बगैर सरकारी सहायताके खुद ग्रामीण ही — जिनमें जमींदार भी शामिल है — अपने बल पर लगभग ये सारी बातें कर सकते हैं। हां सिर्फ नये सिरेसे मकानोंको बनानेकी बात छोड़ दीजिये। और अगर सरकारी सहायता भी मिल जाय तब तो ग्रामोंकी इस तरह पुनर्रचना हो सकती है कि जिसकी कोई सीमा ही नहीं। पर अभी तो मैं यही सोच रहा हूं कि खुद ग्रामनिवासी अपने बल पर परस्पर सहयोगके साथ और सारे गांवके भलेके लिए हिल-मिलकर मेहनत करें तो क्या क्या कर सकते हैं? मुझे तो यह निश्चय हो गया है कि अगर उन्हें उचित सलाह और मार्गदर्शन मिलता रहे, तो गांवकी — मैं व्यक्तियोंकी बात नहीं करता — आय बराबर दूनी हो सकती है। व्यापारी दृष्टिसे काममें आने लायक अटूट साधन-सामग्री हर गांवमें भले ही न हो पर स्थानीय उपयोग और लाभके लिए तो लगभग हर गांवमें है। पर सबसे बड़ी बदकिस्मती तो यह है कि अपनी दशा सुधारनेके लिए गांवके लोग खुद कुछ नहीं करना चाहते।

२ एक गांवके कार्यकर्ताको सबसे पहले गांवकी सफाई और आरोग्यके सवालको अपने हाथमें लेना चाहिये। यों तो ग्रामसेवकोंको

किंकर्तव्यमूढ़ बना देनेवाली अनेक समस्यायें हैं, पर यह ऐसी है जिसकी सबसे अधिक लापरवाही की जा रही है। फलतः गांवकी तन्दुरुस्ती बिगड़ती रहती है और रोग फैलते रहते हैं। अगर ग्रामसेवक स्वेच्छापूर्वक भंगी बन जाय तो वह प्रतिदिन मैला उठाकर उसका खाद बना सकता है और गांवके रास्ते बुहार सकता है। वह लोगोंसे कहे कि उन्हें पाखाना-पेशाब कहां करना चाहिये, किस तरह सफाई रखनी चाहिये, उसके क्या लाभ हैं और उसके न रखनेसे क्या क्या नुकसान होता है। गांवके लोग उसकी बात चाहे सुनें या न सुनें वह अपना काम बराबर करता रहे।

१ तमाम ग्रामीण प्रदर्शनियोंमें प्रधान वस्तु तो चरखा हो और स्थानीय परिस्थितिमें लाभदायक अन्य उद्योग उसके आसपास हों। अगर ऐसी प्रदर्शनी हो और उसके साथ-साथ प्रत्यक्ष प्रयोग तथा व्याख्यान और पत्र भी हों तो ग्रामीणोंके लिए वह निःसन्देह वस्तुपाठका काम देगी और उनके लिए खूब शिक्षाप्रद होगी।

हरिजनसेवक ११–१–३७

हमारे गांव

एक युवकने जो एक गांवमें रहकर अपना निर्वाह करनेकी कोशिश कर रहा है मुझे एक दुःखजनक पत्र भेजा है। वह अंग्रेजी ज्यादा नहीं जानता। इसलिए उसने जो पत्र भेजा है, उसे मैं बहुत संक्षिप्त रूपमें ही देता हूं

> १५ साल एक कस्बेमें बिताकर, तीन साल पहले जब कि बालक था मैंने इस ग्राम-जीवनमें प्रवेश किया। अपनी घरेलू परिस्थितियोंके कारण मैं कालिजकी शिक्षा प्राप्त नहीं कर सका। जब आपने ग्राम-पुनर्रचनाका जो काम शुरू किया उसने मुझे ग्रामजीवन ग्रहण करनेका प्रोत्साहन दिया। मेरे पास कुछ जमीन है। कोई ५ [illegible] की मेरे गांवकी बस्ती है। लेकिन इस गांवके निकट सम्पर्कमें आनेके बाद कोई तीन-चौथाईसे भी ज्यादा लोगोंमें मुझे नीचे लिखी बातें मिलती हैं

१ दलबन्दी और लड़ाई-झगड़े
२ ईर्ष्या-द्वेष
३ निरक्षरता
४ शरारत
५ फूट
६ लापरवाही
७ बेढंगापन
८ पुरानी निरर्थक रूढ़ियोंका आग्रह और
९ बेरहमी।

यह स्थान दूर एक कोनेमें है जहां आम तौर पर कोई आता-जाता नहीं। कोई बड़ा आदमी तो ऐसे दूरके गांवोंमें कभी नहीं गया। लेकिन उन्नतिके लिए बड़े आदमियोंकी सम्मति आवश्यक है। इसलिए आपसे पूछते हुए मैं डरता हूं। आप मुझे क्या सलाह और आदेश देते हैं?

इसमें शक नहीं कि इस नवयुवकने ग्रामजीवनकी जो तसवीर खींची है वह अतिशयोक्तिपूर्ण है। मगर उसने जो कुछ कहा है उसे आम तौर पर माना जा सकता है। यह बुरी हालत क्यों है इसकी वजह मालूम करनेके लिए दूर जानेकी जरूरत नहीं। क्योंकि जिन्हें शिक्षाका सौभाग्य प्राप्त है उन्होंने गांवोंकी बहुत उपेक्षा की है। उन्होंने अपने लिए शहरी जीवन चुना है। ग्राम-आन्दोलन तो इसी बातका एक प्रयत्न है कि जो लोग सेवाकी भावना रखते हैं उन्हें गांवोंमें बसकर ग्रामवासियोंकी सेवामें लग जानेके लिए प्रेरित करके गांवोंके साथ स्वास्थ्यप्रद सम्पर्क स्थापित किया जाय। पत्रप्रेषक युवकने जो दुरवस्था देखी वे ग्राम जीवनमें बद्धमूल नहीं है। फिर, जो लोग सेवाभावसे ग्रामोंमें बसे हैं वे अपने सामने कठिनाइयां देखकर हतोत्साह नहीं होते। वे तो इस बातको जानकर ही वहां जाते हैं कि अनेक कठिनाइयोंमें यहां तक कि ग्रामवासियोंकी उदासीनताके होते हुए भी उन्हें वहां काम करना है। जिन्हें अपने मिशनमें और खुद अपने-आपमें विश्वास है वे ही ग्राम वासियोंकी सेवा करके उनके जीवन पर कुछ असर डाल सकेंगे। सच्चा

जीवन बिताता शुद ऐसा लगता है, जिसका आसपासके लोगों पर जरूर असर पड़ता है। लेकिन इस नवयुवकके साथ शायद कठिनाई यह है कि वह किसी सेवाभावसे नहीं बल्कि सिर्फ अपना जीवन-निर्वाहके लिए रोजी कमानेको गांवमें गया है। और जो सिर्फ कमानेके लिए ही वहां जाते हैं उनके लिए ग्रामजीवनमें कोई आकर्षण नहीं है यह मैं स्वीकार करता हूं। सेवाभावके बगैर जो लोग गांवोंमें जाते हैं उनके लिए तो उसकी नवीनता नष्ट होते ही ग्रामजीवन नीरस हो जायगा।

अतः गांवोंमें जानेवाले किसी नवयुवकको कठिनाइयोंसे घबराकर तो कभी अपना रास्ता नहीं छोड़ना चाहिये। उसके साथ प्रयत्न जारी रखा जाय तो मालूम पड़ेगा कि गांववाले शहरवालोंसे बहुत भिन्न नहीं हैं और उन पर दया करने और ध्यान देनेसे वे भी साथ देंगे। यह निस्सन्देह सच है कि गांवोंमें देशके बड़े आदमियोंके सम्पर्कका अवसर नहीं मिलता। हां ग्राम-मनोवृत्तिकी वृद्धि होने पर नेताओंके लिए यह जरूरी हो जायगा कि वे गांवोंमें दौरा करके उनके साथ जीवित सम्पर्क स्थापित करें। मगर चैतन्य रामकृष्ण तुलसीदास कबीर, नानक दादू तुकाराम तिरुवल्लुवर जैसे सन्तोंके ग्रन्थोंके रूपमें महान और श्रेष्ठ जनोंका सत्संग तो सबको अभी भी प्राप्त है। कठिनाई यही है कि मनको इन स्थायी महत्त्वकी बातोंको ग्रहण करने लायक कैसे बनाया जाय। अगर आधुनिक विचारोंका राजनीतिक सामाजिक आर्थिक और वैज्ञानिक साहित्य प्राप्त करनेसे आशय हो तो कुतूहल शांत करनेके लिए ऐसा साहित्य मिल सकता है। लेकिन मैं यह मंजूर करता हूं कि जिस आसानीसे धार्मिक साहित्य मिल जाता है वैसे यह साहित्य नहीं मिलता। सन्तोंने तो सर्वसाधारणके ही लिए लिखा और कहा है। पर आधुनिक विचारोंको सर्वसाधारणके ग्रहण करने योग्य रूपमें अनूदित करनेका शौक अभी पूरे रूपमें सामने नहीं आया है। यह जरूर है कि समय रहते ऐसा होना चाहिये। अतएव इस पत्रप्रेषक जैसे नवयुवकोंको मेरी सलाह है कि वे अपना प्रयत्न छोड़ न दें बल्कि उसमें लगे रहें और अपनी उपस्थितिसे गांवोंको अधिक प्रिय और रहने योग्य बना दें। अन्तिम यह वे करेंगे ऐसी सेवासे ही द्वारा जो गांववालोंके अनुकूल

हो। अपने ही परिश्रमसे गांवोंको अधिक साफ-सुथरा बनाकर और अपनी योग्यतानुसार गांवोंकी निरक्षरता दूर करके हरएक व्यक्ति इसकी शुरुआत कर सकता है। और अगर उनके जीवन साफ सुघड़ और परिश्रमी हों तो इसमें कोई शक नहीं कि जिन गांवोंमें वे काम कर रहे होंगे उनमें भी उसकी छूत फैलेगी और गांववाले भी साफ, सुघड़ और परिश्रमी बनेंगे।

हरिजनसेवक २–२–३७

आवश्यक योग्यतायें

[*नीचे दी गई कुछ योग्यतायें गांधीजीने सत्याग्रहियोंके लिए* आवश्यक बतलाई थीं। लेकिन चूंकि उनके मतानुसार एक ग्राम सेवकको भी सच्चा सत्याग्रही होना चाहिये इसलिए ये योग्यतायें ग्रामसेवक पर भी लागू होनेवाली मानी जा सकती हैं। — सं]

१ ईश्वरमें उसकी सजीव श्रद्धा होनी चाहिये क्योंकि वही उसका आधार है।

२ वह सत्य और अहिंसाको धर्म मानता हो और इसलिए उसे मनुष्य-स्वभावकी सुप्त सात्त्विकतामें विश्वास होना चाहिये। अपनी तपश्चर्याके रूपमें प्रदर्शित सत्य और प्रेमके द्वारा वह उस सात्त्विकताको जाग्रत करना चाहता है।

३ वह चारित्र्यवान हो और अपने सत्यके लिए जान और मालकी कुरबान करनेके लिए तैयार हो।

४ वह आदतन खादीधारी हो और कातता हो। हिन्दुस्तानके लिए यह लाजिमी है।

५ वह निर्व्यसनी हो जिससे कि उसकी बुद्धि हमेशा स्वच्छ और स्थिर रहे।

६ अनुशासनके नियमोंका पालन करनेमें हमेशा तत्पर रहता हो।

यह न समझना चाहिये कि इन शर्तोंमें ही सत्याग्रहीकी योग्यताओंकी परिसमाप्ति हो जाती है। ये तो केवल दिग्दर्शक हैं।

हरिजनसेवक २५–३–३९

ग्रामसेवाके आवश्यक अंग

ग्राम-व्यवहारमें अगर सफाई न आवे तो हमारे गांव कचरेके घूरे जैसे ही रहेंगे। ग्राम-सफाईका सवाल प्रजाके जीवनका अविभाज्य अंग है। यह प्रश्न जितना आवश्यक है, उतना ही कठिन भी है। अनादि कालसे जिस अस्वच्छताकी आदत हमें पड़ गई है उसे दूर करनेके लिए महान पराक्रमकी आवश्यकता है। जो सेवक ग्राम-सफाईका शास्त्र नहीं जानता खुद भंगीका काम नहीं करता वह ग्रामसेवाके लायक नहीं बन सकता।

नई तालीमके बिना हिन्दुस्तानके करोड़ों बालकोंको शिक्षण देना लगभग असम्भव है, यह चीज सर्वमान्य हो गई कही जा सकती है। इसलिए ग्रामसेवकको उसका ज्ञान होना ही चाहिये। उसे नई तालीमका शिक्षक होना चाहिये। इस तालीमके पीछे प्रौढ़-शिक्षण तो अपने-आप चला आयेगा। जहां नई तालीमने घर कर लिया होगा वहां बच्चे ही माता-पिताके शिक्षक बन जानेवाले हैं। कुछ भी हो ग्रामसेवकके मनमें प्रौढ़-शिक्षण देनेकी लगन होनी चाहिये।

स्त्रीको अर्धांगिनी माना गया है। जब तक कानूनसे स्त्री और पुरुषके हक समान नहीं माने जाते जब तक लड़कीके जन्मका लड़केके जन्म जितना ही स्वागत नहीं किया जाता तब तक समझना चाहिये कि हिन्दुस्तान लकवेके रोगसे ग्रस्त है। स्त्रीकी अवगणना अहिंसाकी विरोधी है। इसलिए ग्रामसेवकको चाहिये कि वह हर स्त्रीको मां बहन या बेटीके समान समझे और उसके प्रति आदर-भाव रखे। ऐसा ग्रामसेवक ही ग्रामवासियोंका विश्वास प्राप्त कर सकेगा।

रोगी प्रजाके लिए स्वराज्य प्राप्त करना मैं असंभव मानता हूं। इसलिए हम लोग आरोग्य-शास्त्रकी जो अवगणना करते हैं, वह दूर होनी चाहिये। अतः ग्रामसेवकको आरोग्य-शास्त्रका सामान्य ज्ञान होना चाहिये।

राष्ट्रभाषाके बिना राष्ट्र नहीं बन सकता। हिन्दी-हिन्दुस्तानी उर्दू न समझेमें न पड़कर ग्रामसेवक अगर वह राष्ट्रभाषा नहीं जानता उसका ज्ञान हासिल करे। उसकी बोली ऐसी होनी चाहिये जिसे हिन्दू मुसलमान सब समझ सकें।

हमने अंग्रेजीके मोहमें फंसकर मातृभाषाका द्रोह किया है। इस द्रोहके प्रायश्चित्तके तौर पर भी राष्ट्रसेवक मातृभाषाके प्रति लोगोंके मनमें प्रेम उत्पन्न करेगा। उसके मनमें हिन्दुस्तानकी सब भाषाओंके लिए आदर होगा। उसकी अपनी मातृभाषा जो भी हो जिस प्रदेशमें वह बसेगा वहांकी मातृभाषा वह स्वयं सीखकर अपनी मातृभाषाके प्रति वहांके लोगोंकी भावना बढ़ायेगा।

मगर इस सबके साथ-साथ आर्थिक समानताका प्रचार न किया गया तो यह सब निकम्मा समझना चाहिये। आर्थिक समानताका यह अर्थ हरगिज नहीं कि हरएकके पास बराबर समान राशि होगी। मगर यह अर्थ जरूर है कि हरएकके पास ऐसा घरबार, वस्त्र और खाने पीनेका सामान होगा कि जिससे वह सुखसे रह सके। और जो घातक असमानता आज मौजूद है वह केवल अहिंसक उपायोंसे ही नष्ट होगी।

हरिजनसेवक १७–८–’४

समग्र ग्रामसेवा

रचनात्मक कार्यकर्ताओंकी सभामें एक प्रश्नका जवाब देते हुए गांधीजीने कहा

अठारह-विध कार्यक्रममें समग्र सेवा आ ही जाती है जैसे गांवमें जितने लोग रहते हैं उन्हें पहचानना उन्हें जो सेवा चाहिये वह देना अर्थात् उसके लिए साधन जुटा देना और उनको वह काम करना सिखा देना दूसरे कार्यकर्ता पैदा करना आदि। ग्रामसेवक ग्रामवासियों पर इतना प्रभाव डालेगा कि वे खुद आकर उससे सेवा मांगेंगे और उसके लिए जो साधन या दूसरे कार्यकर्ता चाहिये उन्हें जुटानेमें उसकी पूरी मदद करेंगे। मानो कि मैं एक देहातमें घानी लगाकर बैठा हूं। तो मैं घानीसे सम्बन्ध रखनेवाले सब काम तो करूंगा ही मगर मैं १५ से २ रुपये कमाने वाला सामान्य घांची (तेली) नहीं बनूंगा। मैं तो महात्मा घांची बनूंगा। महात्मा शब्द मैंने विनोदमें इस्तेमाल किया है। इसका अर्थ केवल यह है कि अपने घांचीपनमें मैं इतनी सिद्धि प्राप्त करूंगा कि गांववाले आश्चर्यचकित हो जायंगे। मैं गीता पढ़नेवाला कुरानशरीफ पढ़नेवाला

उनके बच्चोंको शिक्षा दे सकनेकी शक्ति रखनेवाला घांची बनूंगा। समयके अभावमें मैं लड़कोंको पढ़ा न सकूं, यह दूसरी बात है। लोग आकर कहेंगे कि "तेली महाशय, हमारे लड़कोंके लिए एक शिक्षक ठीक कर दीजिये।" मैं कहूंगा "शिक्षक मैं ला दूंगा, मगर उसका खर्चा आपको बरदाश्त करना होगा।" वे खुशीसे मेरी बात स्वीकार करेंगे। मैं उन्हें कातना सिखा दूंगा। जब वे बुनकरकी मददकी मांग करेंगे तो शिक्षककी तरह उन्हें बुनकर ला दूंगा, ताकि जो चाहे सो बुनना भी सीख ले। मैं उन्हें ग्राम-सफाईका महत्त्व बताऊंगा। जब वे सफाईके लिए भंगी मांगेंगे तो मैं कहूंगा, "मैं खुद भंगी हूं। आइये, आपको यह काम भी सिखा दूं।" यह है मेरी समग्र ग्रामसेवाकी कल्पना।

हरिजनसेवक १७–१–'४६

गांवोंमें दलबन्दी और मतभेद

सवाल — करीब करीब हर गांवमें पार्टियां और उनके आपसी मतभेद रहते हैं। इसलिए जब ग्रामसेवाके लिए हम स्थानीय या उसी गांवकी मदद लेने जाते हैं तो हमारी मरजी हो या न हो, हम सत्ताके लिए होनेवाले वहांके सियासी झगड़ोंमें फंस जाते हैं। इस मुश्किलको किस तरह टाला जा सकता है? क्या हमें स्थानीय पार्टियोंसे अलग रहनेकी कोशिश करके बाहरी कार्यकर्ताओंकी मददसे काम चालू रखना चाहिये? हमारा अनुभव है कि इस तरीकेसे किया जानेवाला काम तभी तक चलता है जब तक बाहरकी मदद मिलती रहती है। और जहां वह मदद बन्द हुई कि काम भी बन्द हो जाता है। इसलिए स्थानीय जनताका सहयोग हासिल करने और उसमें आगे बढ़कर काम करनेकी सूझ पैदा करनेके लिए हमें क्या करना चाहिये?

जवाब — यह हिन्दुस्तानकी बदकिस्मती है कि जैसी दलबन्दी और मतभेद उसके शहरोंमें हैं वैसे ही देहातोंमें भी देखे जाते हैं। और जब गांवोंकी भलाईका खयाल न रखते हुए अपनी पार्टीकी ताकत बढ़ानेके लिए गांवोंका उपयोग करनेके खयालसे सियासी सत्ताकी बू हमारे देहातोंमें पहुंचती है तो उससे देहातियोंको मदद मिलनेके बजाय

उनकी तरक्कीमें रुकावट ही होती है। मैं तो कहूंगा कि चाहे जो नतीजा हो हमें ज्यादासे ज्यादा मात्रामें स्थानीय मदद लेनी चाहिये और अगर हम सियासी सत्ता हड़पनेकी बुराईसे दूर रहें तो हमारे हाथों कोई गलती होनेकी सम्भावना नहीं रहती। हमें याद रखना चाहिये कि शहरोंके अंग्रेजी पढ़े हुए स्त्री-पुरुषोंने हिन्दुस्तानके आधारभूत गांवोंको भुला देनेका अपराध किया है। इसलिए आज तककी हमारी इस लापरवाहीको याद करनेसे हममें धीरज पैदा होगा। अभी तक मैं जिस जिस गांवमें गया हूं वहां मुझे एक न एक सच्चा कार्यकर्ता मिला ही है। लेकिन गांवोंमें भी लेने लायक कोई अच्छी चीज होती है, ऐसा माननेकी नम्रता जब हममें नहीं होती तब वहां हम कोई नहीं मिलता। बेशक हमें स्थानीय सियासी झगड़ोंसे दूर रहना चाहिये। लेकिन यह हम तभी कर सकते हैं जब हम सारी पार्टियोंकी और किसी भी पार्टीमें शामिल न होनेवाले लोगोंकी सच्ची मदद लेना सीख जायंगे। अगर हम गांववालोंसे अलग रहेंगे या उन्हें अपने कामोंसे अलग रखेंगे तो हमारा किया-कराया सब फिजूल जायगा। इस मुश्किलका मुझे खयाल था। इसीलिए एक गांवमें एक कार्यकर्ता रखनेके नियमको सख्तीसे पालनेकी मैंने कोशिश की है। जहां काम करने वाले भाई या बहनको बंगला नहीं आती वहां मैंने बंगला जाननेवाला एक दुभाषिया रखा है। अभी तो मैं नहीं कह सकता हूं कि इस तरीकेसे मेरा काम अच्छा चल रहा है। यहां मैं यह भी कह देना चाहता हूं कि किसी नतीजे पर जल्दीसे पहुंच जानेकी हमें बुरी आदत पड़ गई है। सवाल करनेवाले भाई कहते हैं कि इस तरह बाहरी रखा जानेवाला काम बाहरकी मददसे ही चलता है और इस तरहकी मददके बन्द होते ही वह भी बन्द हो जाता है। किसी काममें झटसे ऐसा दोष निकालनेके पहले मैं तो यह कहूंगा कि किसी एक गांवमें कुछ साल रहकर वहांके कार्यकर्ताओंके जरिये काम करनेका तजुरबा भी इस बातका पूरा सबूत नहीं माना जा सकता कि स्थानीय कार्यकर्ता खुद कोई काम नहीं कर सकते या उनके बगैर कोई काम नहीं हो सकता। यह जाहिर है कि इससे उलटी बात ही सच है। इसलिए सवालके अन्तिम भागकी [illegible] बात करना

जरूरी है। मैं प्रमुख कार्यकर्ताओंसे साफ शब्दोंमें यह कहूंगा — बाहरकी जो मदद मिल रही है उसे बन्द कर दीजिये। सिर्फ स्थानीय मदद ही मांगके हिम्मत और धीरजसे अपना काम चलाइये। अगर आपका काम सफल न हो तो दूसरे लोगों या संस्थाओंकी राह देखनेके बजाय खुदको ही दोष देना सीखिये।

हरिजनसेवक २-३-'४७

१३
विद्यार्थी और गांव

बड़ी उमरके विद्यार्थियों और इसलिए कॉलेजके सारे विद्यार्थियोंको अध्ययन-कालमें ही ग्रामसेवा शुरू कर देनी चाहिये। ऐसे कुछ समय तक गांवोंमें काम करनेवाले विद्यार्थियोंके लिए एक योजना नीचे दी जाती है।

विद्यार्थियोंको अपनी गर्मीकी पूरी छुट्टियां ग्रामसेवामें बितानी चाहिये। इसके लिए बने-बनाये रास्ते पर चलनेके बजाय वे अपनी संस्थाओंके पासके गांवोंमें घूमते हुए जायं, गांववालोंकी हालतका अध्ययन करें और उन्हें अपना मित्र बनायें। यह आदत उन्हें गांववालोंके सम्पर्कमें लायेगी। जब विद्यार्थी उनके बीच रहनेके लिए आयेंगे तब गांववाले पहलेके मौके मौके पर स्थापित हुए सम्पर्कके कारण मित्रोंकी तरह उनका स्वागत करेंगे न कि अजनबी मानकर उन्हें शककी निगाहसे देखेंगे। गर्मीकी लम्बी छुट्टियोंमें विद्यार्थी गांवोंमें जाकर रहें और प्रौढ़ोंके वर्ग चलायें, गांववालोंको सफाई और स्वच्छताके नियम सिखायें और मामूली बीमारोंकी सेवा-शुश्रूषा करें। वे गांवमें चरखा भी दाखिल करें और ग्रामवासियोंको अपने एक-एक मिनटका सदुपयोग करना सिखायें। ऐसा करनेके लिए विद्यार्थियों और शिक्षकोंको छुट्टियोंके उपयोगकी दृष्टिमें संशोधन करना होगा। अकसर विचारहीन शिक्षक छुट्टियोंमें करनेके लिए घरकाम विद्यार्थियों पर लाद देते हैं। मेरी रायमें यह हर हालतमें बुरी आदत है। छुट्टियोंका समय ऐसा

अक्षरज्ञान संपूर्ण शिक्षाक्रमका केवल एक भाग और ऊपर बताये गये विद्यान्तर उद्देश्यका साधनमात्र है।

मेरा दावा है कि इस ग्रामसेवाके लिए उदार हृदय और पूर्ण शुद्ध चरित्र अत्यन्त आवश्यक है। ये दो मुख्य गुण ग्रामसेवकमें हों तो दूसरे गुण अपने-आप उसमें आ जायंगे।

आखिरी सवाल रोटीका है। शरीर-श्रम करनेवालेको उसकी मजदूरी मिलनी ही चाहिये। उसके लिए जीवन-वेतन मिलना तो निश्चित है। इससे ज्यादा पैसा इसमें नहीं मिल सकता। आप अपनी और देशकी दोनोंकी सेवा नहीं कर सकते। खुदकी सेवा देशकी सेवासे अत्यन्त सीमित हो जाती है और इसलिए उसमें हमारे अत्यन्त गरीब देशके सूदेश बाहरकी जीविकाके लिए कोई गुंजाइश नहीं रहती है।

यंग इंडिया २६-१२-२९

१४

स्त्रियां और गांव

बाल-विवाहकी टीका करते हुए गांधीजीने लिखा

बाल-विवाहकी यह बुराई जितनी शहरोंमें फैली हुई है उतनी ही गांवोंमें भी फैली हुई है। यह काम तो खास करके स्त्रियोंका है। पुरुषोंका भी अपने स्त्रियोंका काम करना तो है ही परन्तु पुरुष जब पशु बन जाता है तब वह समझदारीकी बात सुनना पसन्द नहीं करता। स्त्रियां अपना आत्मा ही अपना इनकार करनेका अधिकार बनाता है और पुरुषको उनका धर्म समझाता है। यह उन्हें सिवा स्त्रियोंके और कौन सिखा सकता है? इसलिए मैं यह सलाह देनेका साहस करता हूं कि अखिल भारत महिला परिषद यदि अपना नाम सार्थक करना है तो उसे शहरोंसे हटकर गांवोंके कार्यक्षेत्रमें उतरना चाहिये। मैं जानता हूं और यह मुख्य कठिनाई है कि शहरमें रहनेवाली अंग्रेजी पढ़ी-लिखी बहनों

तक ही वे पहुंचेंगी। असल जरूरत तो गांवोंकी स्त्रियोंके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क जोड़नेकी है। यह सम्बन्ध अभी जुड़ भी जाय तो जुड़नेके साथ ही काम सरल नहीं हो जायगा। पर किसी न किसी दिन तो इस दिशामें शुरुआत करनी ही पड़ेगी। उसके बाद ही किसी परिणामकी आशा की जा सकती है। अखिल भारत महिला-परिषद् क्या अखिल भारत ग्रामोद्योग संघके साथ काम करेगी? कोई भी ग्रामसेवक या ग्राम सेविका चाहे कितनी ही कुशल हो तो भी उसे मात्र समाज-सुधारके लिए गांवोंके लोगोंके पास जानेका विचार नहीं करना चाहिये। उसे तो ग्राम जीवनके सभी अंगोंके सम्पर्कमें आना पड़ेगा। मैंने अनेक बार कहा है और आज फिर कहता हूं कि ग्रामसेवा ही सच्ची जनशिक्षा है। शिक्षा अक्षरज्ञानकी नहीं देनी है, बल्कि ग्रामवासियोंको यह सिखाना है कि मनुष्य जो विचार करनेवाला प्राणी कहा जाता है वास्तविक जीवन व्यतीत करने योग्य किस प्रकार बन सकता है।

हरिजनसेवक १०-११-३५

१५
कांग्रेस और गांव

जन-संपर्क

कांग्रेसकी कार्यकारिणी समितिने अपनी हालकी बैठकमें स्वीकृत अपने एक प्रस्तावमें इस बात पर जोर दिया है कि कांग्रेसवालोंके सदस्यों और खासकर दूसरे कार्यकर्ताओंके लिए यह बहुत जरूरी है कि जिन लोगोंके द्वारा ग्रामवासियों और उनके प्रतिनिधियोंके बीच सीधा सम्पर्क स्थापित हो सका है उनसे तय्यार करवा कर कांग्रेसका १ २ का रचनात्मक कार्यक्रम चलवायें। धारासभाओंके जो प्रतिनिधि चुने गये हैं वे चाहें तो ग्रामवासियोंकी सेवा कर सकते हैं या उन्हें आर्थिक सहायता पहुंचा सकते या शायद कानूनी संरक्षण भी दिला सकते हैं। पर वे जब तक वास्तविक रचनात्मक कार्यक्रममें ग्राम वासियोंकी दिलचस्पी नहीं बढ़ाते — अर्थात् आर्थिक लाभ-कमाई द्वारा

और लोगोंको उचित काम दिया जाय तो मद्यनिषेधका काम बगैर किसी खर्चके चल सकता है इतना ही नहीं बल्कि उससे मुनाफा हो सकता है। यह काम खासकर स्त्रियां कर सकती हैं।

यही बात अस्पृश्यताके बारेमें है। अस्पृश्यताके दुष्परिणामोंको कानून द्वारा हम नष्ट कर दें और यह करना ही है। पर जब तक लोग अपने दिलसे छूआछूतकी भावनाको नहीं निकालेंगे तब तक हम सच्ची स्वतंत्रता नहीं मिल सकती। आम लोगोंके हृदयसे जब तक अस्पृश्यताकी भावना दूर नहीं होती तब तक वे एकताके भावसे और एक हृदयसे कदापि काम नहीं कर सकते।

इस प्रकार यह और इस कार्यक्रमके अन्य तीनों अंग लोकशिक्षासे भरे हुए हैं। और अब तो तीन करोड़ स्त्री-पुरुषोंके हाथमें सही या गलत रीतिसे सत्ता सौंप दी गई है। अतः यह काम तात्कालिक महत्वका हो गया है। यह सत्ता चाहे जितनी अल्प और सीमित हो तो भी कांग्रेसवादियों और दूसरोंके हाथमें जिनके इन मतदाताओंसे वास्ता पड़ने हो इन तीन करोड़ मनुष्योंको सही या गलत रास्तेसे शिक्षा देनेकी शक्ति है। जो वस्तुएं उनके जीवनके साथ अत्यन्त निकट संबंध रखती हैं उनमें उनकी बिलकुल ही उपेक्षा करना गलत रास्ता है।

हरिजनसेवक २२–५–३७

लोकसेवक-संघके सदस्योंकी योग्यता

[गांधीजीकी हत्याके कुछ समय पूर्व उन्होंने लोकसेवक-संघके विधानका मसौदा तैयार किया था। वे चाहते थे कि कांग्रेस देशकी आजादीके बाद लोकसेवक-संघका रूप ले ले। उसके सदस्य बनना चाहनेवालोंके लिए उन्होंने अन्य शर्तोंके साथ नीचेकी शर्तें रखी थीं। —सं]

१ हरएक सेवक अपने हाथसे कते हुए सूतकी या चरखा-संघ द्वारा प्रमाणित खादी हमेशा पहननेवाला और नशीली चीजोंसे दूर रहनेवाला होना चाहिये। अगर वह हिन्दू है तो उसे अपनेमें से और अपने परिवारमें से हर किस्मकी छुआछूत दूर करनी चाहिये और जातियोंके बीच एकतार, सब धर्मोंके प्रति समभाव और जाति वर्ण या स्त्री-पुरुषके किसी भेदभावके

बिना सबके लिए समान अवसर और धर्मके आदर्शमें विश्वास रखनेवाला होना चाहिये।

२ अपने कार्यक्षेत्रमें रहने हरएक गांववालेके निजी संसर्गमें रहना चाहिये।

३ गांववालोंमें से वह कार्यकर्ताओंको चुनेगा और उन्हें तालीम देगा। इन सबका वह रजिस्टर रखेगा।

४ वह अपने रोजानाके कामका रेकार्ड रखेगा।

५ वह गांवोंको इस तरह संगठित करेगा कि वे अपनी खेती और गृह-उद्योगों द्वारा स्वयंपूर्ण और स्वावलम्बी बन जायें।

६ गांववालोंको वह सफाई और तन्दुरुस्तीकी तालीम देगा और उनकी बीमारी व रोगोंको रोकनेके लिए सारे उपाय काममें लायेगा।

७ हिन्दुस्तानी तालीमी संघकी नीतिके मुताबिक नई तालीमके आधार पर वह गांववालोंकी पैदा होनेसे लेकर मरने तककी सारी शिक्षाका प्रबन्ध करेगा।

हरिजनसेवक २२-२-४८

१५

सरकार और गांव

सरकार क्या कर सकती है?

यह पूछना वाजिब है कि कांग्रेसी मंत्री जो अब ओहदों पर आ गये हैं खादी और दूसरे देहाती धंधोंके लिए क्या करेंगे? मैं तो इस सवालको और भी फैलाना चाहता हूं ताकि वह हिन्दुस्तानके तमाम प्रान्तोंकी सरकारों पर लागू हो। गरीबी तो हिन्दुस्तानके सभी प्रान्तोंमें है। इसी तरह आम जनताके उद्धारके जरिये भी हैं। अखिल भारत चरखा-संघ और अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघका ऐसा ही अनुभव है। एक यह सुझाव भी आया है कि इस कामके लिए एक अलग मंत्री होना चाहिये क्योंकि इसके ठीक संगठनमें एक मंत्रीका पूरा वक्त लग जायगा। मैं तो इस सुझावसे डरता

हैं क्योंकि अभी तक हम अपने खर्चके नापमें से अंग्रेजी पैमानेको छांट नहीं सके हैं। अलग मंत्री रखा जाय या न रखा जाय इस कामके लिए एक महकमा तो बेशक जरूरी है। आजकल खाने और पहननेके संकटके जमानेमें यह महकमा बड़ी मदद कर सकता है। अखिल भारत चरखा-संघ और अखिल भारत ग्रामोद्योग-संघके निष्णात मंत्रियोंको मिल सकते हैं। आज यह संभव है कि थोड़े समयमें काफ़ीसे थोड़ी रकम लगाकर तमाम हिन्दुस्तानको खादी पहना दी जाय। हर प्रान्तकी सरकारको गांववालोंसे कहना होगा कि उन्हें अपने बरतनेके लिए खद्दर खुद तैयार कर लेना चाहिये। इस तरह स्थानीय उत्पादन और बंटवारेका सवाल अपने-आप हल हो जायगा। और बेशक शहरोंके लिए कमसे कम थोड़ी खादी तो बच रहेगी जिससे स्थानीय मिलों पर दबाव कम हो जायगा। तब वे मिलें दुनियाके दूसरे हिस्सोंमें कपड़ेकी जरूरत पूरी करनेमें हिस्सा लेनेके काबिल हो जायेंगी।

यह नतीजा कैसे पैदा किया जा सकता है?

सरकारोंको चाहिये कि गांववालोंको यह सूचना कर दें कि उनसे यह आशा रखी जायगी कि वे अपनी गांवकी जरूरतके लिए एक निश्चित तारीखके अन्दर खद्दर तैयार करें। इसके बाद उनको कोई कपड़ा न दिया जायगा। सरकार अपनी तरफसे गांववालोंको बिनौले या रुई (जिसकी भी जरूरत हो) लागत दामसे देगी और उत्पादनके औजार भी ऐसे दामों पर देगी जो आसानीसे वसूल होनेवाली किस्तोंमें लगभग पांच साल या इससे ज्यादा अर्सेमें अदा हो सकें। सरकार जहां कहीं जरूरी हो उन्हें सिखानेवाले भी दे और यह जिम्मा ले कि अगर गांववालोंके तैयार किये हुए खद्दरसे उनकी जरूरतें पूरी हो जायं तो बाकीका खद्दर सरकार खरीद लेगी। इस तरह बिना हलचलके और बहुत थोड़े ऊपरी खर्चमें कपड़ेकी कमी दूर हो जायगी।

गांवोंकी जांच-पड़ताल की जायगी और ऐसी चीजोंकी एक सूची तैयार की जायगी जो किसी मददके बिना या बहुत थोड़ी मददसे स्थानीय तौर पर तैयार हो सकती हैं और जिनकी जरूरत गांवमें

बरतनेके लिए या बाहर भेजनेके लिए हो। जैसे घानीका तेल घानीकी खली घानीसे निकला हुआ जलानेका तेल हाथका कूटा हुआ चावल ताड़का गुड़ शहद खिलौने मिठाइयां चटाइयां हाथसे बना हुआ कागज गांवका साबुन वगैरा चीजें। अगर इस तरह काफी ध्यान दिया जाय तो उन गांवोंमें जिनमें से ज्यादातर उजड़ चुके हैं या उजड़ रहे हैं जीवनकी चहल-पहल पैदा हो जाय और उनमें अपनी और हिन्दुस्तानके शहरों तथा कस्बोंकी अधिकतर जरूरतें पूरी करनेकी जो अपार शक्ति है वह दिखाई पड़ने लगे।

फिर हिन्दुस्तानमें अनगिनत पशु-धन है जिसकी तरफ हमने ध्यान न देकर गुनाह किया है। गोसेवा-संघको अभी ठीक अनुभव नहीं है फिर भी वह कीमती मदद दे सकता है।

बुनियादी तालीमके बिना गांववाले विद्यासे वंचित रहते हैं। यह जरूरी बात हिन्दुस्तानी तालीमी संघ पूरी कर सकता है। यह प्रयोग पहले ही कांग्रेसी सरकारोंने शुरू किया था पर उनके इस्तीफा दे देनेसे इस काममें रुकावट पैदा हो गई। अब वह तार फिर आसानीसे जोड़ा जा सकता है।

हरिजनसेवक २८-४-'४६

मि० ब्रेनका ग्रामसुधार-प्रयोग

आशा है कि पाठ भाषोंमें प्रकाशित लाला देशराजके लेखोंको पाठकोंने सावधानीसे पढ़ा और समझा होगा। मेरे विचारसे उनमें गुड़गांव जिलेके भूतपूर्व डेप्युटी कमिश्नर मि ब्रेनके गुड़गांव-कार्यक्रम नामसे मशहूर प्रयोगकी तटस्थ और निष्पक्ष आलोचना की गई है। ये लेख यंग इंडिया में छप रहे थे उस बीच मैं मि ब्रेनकी रि रीमेकिंग ऑफ़ विलेज इंडिया (ग्रामीण भारतका पुनर्निर्माण) नामक पुस्तक पढ़ गया जो उनकी मूल पुस्तक विलेज अपलिफ्ट इन इंडिया (भारतमें ग्रामसुधार) का दूसरा संस्करण है। लाला देशराजके लेखोंसे हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि गांवोंके पुनर्निर्माणका गुड़गांव जिलेका प्रयोग वास्तवमें असफल रहा। मि ब्रेनके गुड़गांवसे पीठ फेरते ही वहांके लोग जो उनकी प्रेरणा या दबावसे काम करते थे सो गये मालूम होते हैं आदके गड्ढोंकी उपेक्षा हो रही है नये हल जंग खाने लगे हैं और सहूलियतें खतम हो रही हैं।

इस असफलताका कारण खोजना बहुत मुश्किल नहीं है। यह सुधार भीतरसे नहीं हुआ बल्कि बाहरसे लादा गया था। मि ब्रेनने अपने मातहतों और खुद लोगों पर भी ज्यादासे ज्यादा दबाव डालनेमें अपने अधिकारका उपयोग किया लेकिन जोर-जबरदस्तीसे वे लोगोंको इसका विश्वास नहीं करा सके। इसलिए सफलताके लिए अत्यन्त आवश्यक विश्वासकी इस प्रयोगमें कमी थी। मि ब्रेनने सोचा कि प्रयोगके प्रत्यक्ष परिणाम लोगोंको इसकी उपयोगिताका विश्वास करा देंगे। लेकिन सुधार इस तरह नहीं होता। सुधारकका रास्ता गुलाबके फूलोंसे नहीं कांटोंसे बिछा होता है, जिस पर उसे सावधानीसे चलना होता है। उस रास्ते पर वह रुक रुककर ही चल सकता है,

खर्च या जोखिम उठानेकी हिम्मत नहीं कर सकता। मि० ब्रेन एक ही समय लम्बा रास्ता तय करना चाहते थे इसलिए अपने काममें उन्हें सफलता नहीं मिली।

जब कोई सरकारी अधिकारी सुधारक बनता है, तो उसे यह समझना चाहिये कि उसका सरकारी ओहदा उसके सुधारके रास्तेमें सहायक नहीं होता बल्कि रुकावट डालता है। उसके भरसक प्रयत्न करने पर भी लोग उसे और उसके उद्देश्योंको शककी नजरसे देखेंगे और उन्हें ऐसी जगह भी बाहरकी सलाहका ऐसी नई सलाहका लाभ भी नहीं होगा। और लोग जब कोई काम करते हैं तो अक्सर अधिकारीको खुश करनेके लिए ही करते हैं, सुधारको खुश करनेके लिए नहीं।

दूसरी रुकावट जिसमें मि० ब्रेनको काम करना पड़ा यह थी कि उन्हें रुपये पानेकी लगभग घातक सुविधा प्राप्त थी। मेरी रायमें रुपया यह आखिरी चीज है जिसकी सुधारकको अपने आन्दोलनमें जरूरत होती है। यह उनको नहीं जरूरतोंके ठीक अनुपातमें बिना मांगे उसके पास चला आता है। मैंने ऐसे सुधारकों पर कभी भरोसा नहीं किया जिन्होंने पैसेके अभावको सामने रखकर अपनी असफलताका बचाव किया। जहां सुधारकमें अपने कामके लिए उत्साह है उसका पूरा ज्ञान है और आत्म-विश्वास है वहां पैसेकी मदद हमेशा मिलती ही है। लेकिन मि० ब्रेन अपने प्रयोगकी सफलताके लिए आत्मबल या लोगों पर निर्भर रहनेके बजाय पैसे पर ही ज्यादा निर्भर रहे। इसलिए आन्

बड़े कीमती और महत्त्वपूर्ण हैं। यह पुस्तक बड़ी योग्यतासे लिखी गई है। जो कोई ग्रामसुधारका काम करना चाहते हैं उन्हें जरूरी ही मि० ब्रेनकी पुस्तकका अध्ययन कर लेना चाहिये। मि० ब्रेनने गांवोंमें पाये जानेवाले नीचेके दोष बताये हैं:

१ किसानके खेतीके तरीके दोषपूर्ण हैं।

२ उसका गांव गन्दा होता है, वह गन्दगी, बीमारी और दुःखदर्दमें जीवन बिताता है।

३ वह महामारियोंका शिकार बना रहता है।

४ वह अपनी सारी दौलत बरबाद कर देता है।

५ वह अपनी स्त्रियोंको अपमानित दशा और गुलामीमें रखता है।

६ वह अपने घर या गांवकी तरफ बिलकुल ध्यान नहीं देता और अपनी या अपने आसपासके लोगोंकी हालत सुधारनेके लिए न तो कोई समय देता है न उसके बारेमें कभी विचार करता है।

७ वह किसी भी तरहके परिवर्तनका विरोध करता है, वह अपढ़ है। उसे इस बातका ज्ञान नहीं है कि दूसरे अन्य देशों या उसीके देशके दूसरे भागोंमें रहनेवाले ग्रामवासी कितनी तरक्की कर रहे हैं, न उसे इस बातका ज्ञान है कि वह इरादा कर ले तो खुद अपनी कितनी तरक्की कर सकता है।

इस वर्णनमें बहुत ज्यादा अतिशयोक्ति है। भारतीय किसानके खेतीके तरीके सचमुच बुरे नहीं हैं। कई लोगोंने इस बातकी गवाही दी है कि उसके पास खेतीका कामचलाऊ ज्ञान है, जिसे तुच्छ नहीं माना जा सकता। लेकिन मुझे डर है कि दूसरे और तीसरे दोषको हमें स्वीकार करना होगा। चौथा दोष पूरी तरह नहीं तो बहुत बड़ी हद तक स्वीकार करने योग्य है, क्योंकि उसके पास बरबाद करनेके लिए दौलत ही नहीं होती। पांचवा छठा और सातवा दोष बड़ी हद तक सच है। इन्हें दूर करनेके १८ उपाय सुझाये गये हैं। मैं उन्हें संक्षेपमें नीचे देता हूं:

१ अच्छे मवेशी रखो।

२ खेतीके आधुनिक औजार काममें लो।

३ अच्छे बीज बोओ।
४ कुओं पर रहँट लगाओ।
५ खाद गड्ढोंमें जमा करो।
६ गोबरके उपले बनाना बन्द करो।
७ गांवके बैलोंकी नसल सुधारो।
८ अपने खेतोंमें बाड़ बांधो और ढलावके अनुसार जगह जगह मेड़बन्दी कर दो ताकि बरसातका पानी बरबाद न हो।
९ अपनी जमीनोंको जोड़ लो।
१० फसलोंकी अदलबदल सालभर फसल बोते रहो।
११ हर खाली जगहमें पेड़ लगाओ।
१२ मवेशीको बीमारियोंसे बचानेके लिए उन्हें टीका लगवाओ।
१३ अपनी फसलमें हिस्सा बंटानेवाले चूहों, साहियों और गिलहरियोंको मार डालो।
१४ चरागाहोंका विकास करो।
१५ अपनी आधी जमीनमें डटकर खेती करो और आधी चरागाहके लिए छोड़ दो।
१६ कुएंका पानी ले जानेके लिए जमीनके भीतरसे जानेवाले नलका उपयोग करो।
जो भी घास पात या वनस्पति खेतोंमें उग आवे और उसे उखाड़कर फेंक मत दो, उसे दबाकर खेतोंके टीले न बनने दो।
अपनी नहर और नालियोंकी मेड़ें बनाओ और साफ रखो।

रख रहे हैं। लेकिन ऐसे बहुत कम नये औजार हैं जिन्हें हमने ज्यादा उपयोगी पाया हो। मैं इस ग्रामसके प्रयोगके बारेमें आगे किसी समय निश्चित रूपसे लिखनेकी आशा रखता हूं। इस बीच मैं नये औजारोंका प्रयोग करनेवालोंसे कहूंगा   इस दिशामें धीरे-धीरे जल्दी करो। खादकी रक्षा और गोबरके उपले बनाकर उसकी भयंकर बरबादीको रोकनेका सुझाव बेशक अमलमें लाने लायक है। जमीनोंके टुकड़े होना ऐसी बुराई है, जो मिटनी चाहिये। जमीनके व्यर्थ टुकड़े करनेकी व्यापक बुराईको मिटानेमें कड़ा कानून ही समर्थ हो सकता है। सारे सुझावों पर अमल करनेके लिए सच्ची शिक्षा और आत्म-विश्वासकी जरूरत है। भूखों मरनेवाले किसानको न तो शिक्षा मिली है और न उसमें आत्म विश्वास है क्योंकि वह सोचता है कि गरीबी एक ऐसी विरासत है, जिससे वह कभी अपना पिंड नहीं छुड़ा सकता। सफाई और स्वच्छताके बारेमें मि ब्रेनके सुझाव कीमती हैं। वे किसी भी तरहके कूड़े-कचरे, गोबर, राख वगैराको ठीकसे खोदे हुए गड्ढोंके सिवा और कहीं डालने नहीं देंगे। खादके गड्ढोंका पाखानाकी तरह उपयोग करनेके बारेमें उन्होंने विस्तृत सूचनायें दी हैं। नीचेका लम्बा लेकिन बोधप्रद पैरा मैं देनेकी ललचको मैं रोक नहीं सकता

> गांवके चारों तरफ और गांवके भीतर फैले हुए कूड़े कर्कटके ढेर और गांवके बाहर — कभी कभी गांवके भीतर भी — हर जगह काफी मात्रामें बिखरा हुआ मह मैला घूमता है हवासे सारे गांव पर उड़ाया जाता है और आदमी व मवेशीके पांवोंसे उछाला जाता है। वह तुम्हारे खानेमें व पानीमें गिरता है तुम्हारी आंखों और नाकमें घुसता है और हर सांसके साथ तुम्हारे फेफड़ोंमें पहुंचता है। इस तरह वह तुम्हारी हवा खान और पानीका एक अंग बन जाता है और रोज गांवकी गंदगीका जहर तुम्हारे और तुम्हारे बच्चोंके शरीरमें पहुंचता है। इसके अलावा उस गंदगीमें अनगिनत मक्खियां पैदा होती हैं जो पहले गंदगी पर बैठती हैं और बादमें तुम्हारे खाने पर, तश्तरियों पर और तुम्हारे बच्चोंकी आंखों और मुंह पर बैठती हैं। याद रखो कि ये मक्खियां

सुझाना बिलकुल बेकार है जो आम लोगोंकी पहुंचके बाहर हैं। सुधारके अपने सिद्ध होने पर लोग क्या कर सकते हैं इस बातका इस विचारके साथ कोई मेल नहीं बैठता कि जब तक सुधार उनमें प्रवेश कर रहा है तब तक उन्हें क्या करना चाहिये।

बरबादीको रोकनेके लिए नीचेका इलाज सुझाया गया है

> ब्याह और दूसरे रीति-रिवाजों गहनों सादियों और लड़ाई-झगड़ों पर मूर्खतासे पैसा बरबाद करनेके मौजूदा विचारोंको बिलकुल छोड़ दो।

मुझे डर है कि यह मूर्खताभरी पैसेकी बरबादी ज्यादातर मि० ब्रेनकी कल्पनाकी ही उपज है। यह इने-गिने लोगों तक ही सीमित है। क्योंकि बहुत बड़े हिस्सेके पास रीति-रिवाजों पर खर्च करनेके लिए पैसा ही नहीं है। गहने जमा करनेकी बात कहना पुरानी सरकारी चाल है। सारे हिन्दुस्तानमें मुझे लाखों स्त्रियोंसे मिलनेका मौका आया है। मैंने खुद गहनोंकी निन्दा की है और कई बहनोंके गहने छुड़ा दिये हैं। मैं मानता हूं कि उनमें कोई सौन्दर्य नहीं है। लेकिन अगर रीति-रिवाजोंमें खर्च कर सकनेवालोंकी संख्या थोड़ी है तो गहने खरीदने और जमा करनेवालोंकी संख्या उससे भी कम है। करोड़ों स्त्रियां या तो पत्थरके या लकड़ीके घिनौने गहने पहनती हैं। कई बहनें पीतल या तांबेके गहने पहनती हैं और कुछ चांदीके कड़े और छड़े या पायजेब पहनती हैं। हजारोंमें एकके ही शरीर पर कोई सोनेके गहने दिखाई देते होंगे। इसलिए गहनोंको नकद रुपयोंमें बदलकर बैंकमें जमा करनेकी सलाह तो मेरी रायमें बिलकुल ठीक है लेकिन जब ग्रामसुधारके कार्यक्रमके एक अंगके रूपमें उसका विचार करते हैं तो वह बेमेल लगती है। यही बात आपसी लड़ाई-झगड़ोंके बारेमें कही जा सकती है। इसमें शक नहीं कि मुकदमेबाजीमें जो पैसा खर्च किया जाता है उसकी मात्रा बहुत बड़ी होती है और वह शर्मनाक चीज है लेकिन यह भी उन्हीं लोगों तक सीमित है जिनके पास पैसा है। लाखों-करोड़ोंके पास नामको भी पैसा नहीं होता और ग्रामसुधारके कार्यक्रममें इन्हीं करोड़ों बेदम बेजान और निराश लोगोंका खयाल करना होता है।

गुरुजी गृहस्थीका विश्वास दिलानेके लिए मि० ब्रेन स्त्रियोंको मालिक बनायेंगे और उन्हें घरमें ज्यादा आदरणीय और सच्ची सहधर्मिणियां बनायेंगे। वे लड़कोंके साथ लड़कियोंको भी तब तक स्कूल भेजेंगे जब तक वे बहुत बड़ी नहीं हो जातीं। वे बचपनमें उनकी शादी नहीं करेंगे। वे बड़े उत्साहसे और बड़ी जोरदार भाषामें स्त्रियोंके अधिकारोंका समर्थन करते हैं। यहां दो पैरे उद्धृत किये जाते हैं, जो विचार करने लायक हैं :

> जब तुम्हारी पत्नीको बच्चा पैदा होनेवाला होता है तब तुम उसके लिए एक अंधेरा और गंदा कमरा पसन्द करते हो और मेहतरकी स्त्रीको बुलाते हो। जब तुम्हारा हाथ टूट जाता है तब तुम मेहतरको क्यों नहीं बुलाते? तुम अपनी ही स्त्रियोंमें से कुछको दाईकी तालीम क्यों नहीं दिलाते? भंगियोंकी स्त्रियां जिस तरह डॉक्टर नहीं बन सकतीं उसी तरह वे दाई भी नहीं बन सकतीं। क्या तुम्हारी पत्नीके लिए ऐसे नाजुक समयमें गांवकी एक सबसे नीची जातिवाली स्त्रीकी देखरेखमें रहनेके बजाय अपने ही लोगोंमें से किसी एककी देखभालमें रहना कहीं ज्यादा सुन्दर नहीं होगा? ऊंची जातिकी स्त्रीके लिए नर्स या दाईके कामसे बढ़कर और कोई काम नहीं हो सकता।
>
> अपनी पत्नी और परिवारवालोंके लिए घरका अंधेरेसे अंधेरा और कमसे कम हवावाला हिस्सा सुरक्षित मत रखो। घरमें उनका भी उतना ही महत्त्व है जितना कि तुम्हारा है। और उनकी बुरी तन्दुरुस्ती भी तुम्हारे लिए उतनी ही बुरी चीज है जितनी कि तुम्हारी खुदकी। तुम खेतों पर जाकर अपनेको स्वस्थ रख सकते हो। लेकिन तुम्हारी स्त्रियों और बच्चोंको बहुतसा वक्त घरमें ही बिताना पड़ता है। इसलिए उन्हें घरका सबसे अच्छा और सबसे हवादार हिस्सा दो।

ग्राम्य आरोग्य रक्षावाला यह दूसरा हिस्सा देखिये :

> ईश्वरकी सृष्टिमें मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जो अपने लड़के और लड़कीके बीच भेद करता है और लड़कीको

लड़केसे घटिया मानता है। तुम्हारी माँ एक समय लड़की थी। तुम्हारी पत्नी भी एक समय लड़की ही थी। तुम्हारी लड़कियाँ किसी समय मातायें बनेंगी। अगर लड़कियाँ ईश्वरकी घटिया सृष्टि हों तो तुम खुद भी घटिया हो।

मुझे आशा है कि पाठक भी मेरे साथ कुत्तोंके बारेमें नीचे दिये गये पैरेकी तारीफ करेंगे

कुत्ता मनुष्यका मित्र कहा जाता है। लेकिन मुसलमानोंमें उसके साथ स्त्रीके जैसा ही व्यवहार किया जाता है और वह मनुष्यका दुश्मन माना जाता है। कुत्ता पकड़ कर रखो लेकिन उसे नियमसे खाना दो उसका कोई नाम रखो और उसके गलेमें पट्टा लगाओ उसे अच्छी तालीम दो और ठीकसे उसकी देखभाल करो। लावारिस कुत्तोंको गांवमें भटकने न दो। इस बातका ध्यान रखो कि वे तुम्हारे खानेको न बिगाड़ें रातमें भौंककर तुम्हारी नींद खराब न करें और अन्तमें पागल होकर तुम्हें काटें नहीं।

उनकी पुस्तकमें और भी बहुतसा कीमती मसाला है। उनकी शैली और सजग आंखोंसे गांवका एक भी दोष नहीं बच पाया है। मेरी रायमें ग्रामशिक्षाके बारेमें उनके विचार बिलकुल सही हैं और उनमें शायद ही कोई सुधार किया जा सकता है। मुझ नीचेका हिस्सा उद्धृत करनेका लोभ मैं रोक नहीं सकता

ग्राम-स्कूलका ध्येय गांवके लोगोंको ज्यादा भले ज्यादा बुद्धिमान ज्यादा स्वस्थ और ज्यादा सुखी बनानेका होना चाहिये। अगर किसानका लड़का स्कूलमें आता है, तो उसे स्कूलमें ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिये कि जब वह लौटकर अपने पिताका हल हाथमें ले तब पितासे भी अच्छी तरह अपना काम समाप्त करे और सारे कामकाजमें अधिक बुद्धिमानीका परिचय दे। सबसे बढ़कर तो बच्चोंको स्कूलमें यह सीखना चाहिये कि स्वस्थ जीवन कैसे बिताया जाय और महामारियोंसे खुदको कैसे बचाया जाय। उन लोगोंको शिक्षा देनेसे क्या लाभ जो आगे जाकर अंधे बननेवाले हैं किसी न किसी रूपमें शरीरसे अपंग हों

जानेवाले हैं या बालिग होनेके पहले ही मर जानेवाले हैं? उस हालतमें शिक्षाका क्या उपयोग होगा जब कि उनके घर गन्दे हैं, आरामदेह नहीं हैं और महामारियाँ पूरेके पूरे परिवारोंको साफ कर देती हैं या बच्चोंको गूंगे या अपंग बना देती हैं?

और यह उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए मि० ब्रेन ऐसे व्यक्तिको ग्रामशिक्षक नहीं बनायेंगे जो केवल लिखना पढ़ना और गणित ही लोगोंको सिखा सके। उनकी रायमें उसे सच्चा ग्रामनेता बनना चाहिये, प्रकाश और संस्कृतिका केन्द्र होना चाहिये जिस पर लोगोंका भरोसा हो, जिसके सामने वे अपनी समस्यायें रखते हों और जिससे वे संकट या कठिनाईके समय सलाह-मशविरा करते हों।

> शिक्षकको ग्रामजीवनमें अपना उचित स्थान ग्रहण करना और उसकी रक्षा करनी चाहिये। उसे अपने उपदेशको आचरणमें लाना चाहिये और सुधारके जिन कदमोंकी वह सिफारिश करे, उनमें अपने हाथसे काम करनेका उदाहरण पेश करना चाहिये। श्रमकी प्रतिष्ठा और समाज-सेवाकी प्रतिष्ठा ही उसका जीवन-मंत्र होना चाहिये। और जिस तरह उसे पढ़ना और लिखना सिखानेके लिए तैयार रहना चाहिये उसी तरह गाँवकी सफाई करनेके लिए या लड़ाईका हल सुझानेके लिए भी तैयार रहना चाहिये।

अब मुझे अपने पर काबू रखना चाहिये और ग्रामसुधारके साहित्यमें कीमती वृद्धि करनेवाली इस पुस्तकको पढ़नेकी सिफारिश करके ही सन्तोष मानना चाहिये। यह योजना अपने-आपमें कुल मिलाकर अच्छी और व्यवहारमें लाने लायक है। अगर लाला देशराजकी जानकारी पर भरोसा किया जाय — और मैं मानता हूँ कि उस पर भरोसा किया जाना चाहिये — तो कमसे कम शब्दोंमें इतना तो कहना ही पड़ेगा कि उसका अमल अत्यन्त दोषपूर्ण था। लेकिन इसका कारण मि० ब्रेन और उनके साथियोंमें इच्छाशक्ति और प्रयत्नकी कमी नहीं, बल्कि सरकारी वातावरण और पुरानी लीक पर चलकर काम करनेका ढंग था जिस पर न और उनके साथ काम करनेवाले लोग विजय नहीं पा सके। लेकिन यह एक ऐसा दोष है जिसका उनकी स्थितिमें काम करते

हुए इसमें से भी कोई दूर नहीं कर सकता था। मैं जानता हूं कि मि० ब्रेन हिन्दुस्तानको बदनाम करते रहे हैं और अपने अंग्रेज श्रोताओंके सामने ऐसे तरीके रखते रहे हैं जिन पर वे अपने सीमित निरीक्षणके बल पर पहुंचे थे जिन्हें उनके श्रोता शायद चुनौती नहीं दे सकते और जो उनकी दूरी पर हिन्दुस्तानके बनिस्बत कहीं ज्यादा बड़े रूपमें दिखाई देंगे। लेकिन मैंने उनकी पुस्तकके अपने परीक्षण पर अंग्रेजके नाते उनकी निन्दाओं या उनके प्रयोगकी स्पष्ट असफलताका कोई प्रभाव नहीं पड़ने दिया है। मैं खुद एक सुधारक हूं जिसे ग्रामसुधारमें गहरी दिलचस्पी है इसलिए ईमानदारीसे लिखी हुई इस पुस्तकमें से जो कुछ भी अच्छी बातें मैं निकाल सका उन्हें मैंने निकालकर यहां रखनेका प्रयत्न किया है।

यंग इंडिया १४–११–२९

परिशिष्ट — ख

उपयोगी सूचनाएं

[नीचेके उद्धरण प्रोफेसर जे० सी० कुमारप्पाके लेखोंसे लिये गये हैं।
—मो० क० गांधी]

सहकारी समितियां

सहकारी समितियां केवल ग्रामोद्योगोंके विकासके लिए ही नहीं बल्कि ग्रामवासियोंमें सामुदायिक प्रयत्नकी भावना पैदा करनेके लिए भी आदर्श संस्थाएं हैं। मल्टी-परपज सोसायटी यानी अनेक कामोंको पूरा करनेके लिए बनाई गई गांवकी सहकारी समिति कई बातोंमें उपयोगी सिद्ध हो सकती है। उनमें से कुछ बातें नीचे बताई गई हैं

१ यह उद्योगोंके लिए आवश्यक कच्चा माल और ग्रामवासियोंके लिए जरूरी सामान संग्रह कर सकती है।

२ यह गांवमें बनी चीजोंकी बिक्रीकी तथा गांवके लोगोंको ऐसी चीजें पहुंचानेकी व्यवस्था कर सकती है जो उनके लिए जरूरी हों।

३ यह बोनेके लिए बीज, सुधरे हुए खेतीके औजार, हड्डियों, मास, मछली, खली आदिके खाद तथा वनस्पति-खाद आदिका वितरण गांवके लोगोंमें कर सकती है।

४ यह गांवके सांडको पालनेका प्रबन्ध कर सकती है।

५ कर-वसूलीके सम्बन्धमें यह सरकार और गांवके लोगोंके बीच मध्यस्थके तौर पर सेवा कर सकती है।

अनाजको एक स्थानसे दूसरे स्थान पर ले जानेमें जो बिगाड़ और बरबादी होती है और उसे इकट्ठा करके किसी केन्द्रमें ले जाने और वहांसे फिर गांवोंमें बांटनेमें जो खर्च होता है वह खर्च इन सहकारी समितियों द्वारा बचाया जा सकता है। सरकार और प्रजा दोनोंकी दृष्टिसे सहकारी समिति एक बड़ा विश्वासपात्र साधन है। यदि गांवोंकी सहकारी समितियां अनाजका संग्रह रख सकें, तो गांवोंके कर्मचारियोंके वेतनका कुछ हिस्सा आसानीसे अनाजके रूपमें दिया जा सकता है और इस प्रकार जमीन-महसूल भी अनाजके रूपमें वसूल करनेकी बड़ी वांछनीय पद्धतिके अमलकी अनुकूलता हो सकती है।

खेती

फसल बोनेके बारेमें भी अमुक नियमन दाखिल करने चाहिये। इसमें दो बातें ध्यानमें रखनी चाहिये (१) कपास या तम्बाकू जैसी सफल आर्थिक दृष्टिसे पैदा की जानेवाली फसलके बजाय हरएक गांवको अपनी जरूरतका अनाज और गांवके लोगोंकी प्राथमिक जरूरतें पूरी करनेके लिए जरूरी कच्चा माल पैदा करनेकी कोशिश करनी चाहिये। (२) उसे कारखानेके काममें आनेवाला नहीं, लेकिन ग्रामोद्योगोंके लिए उपयोगी हो ऐसा कच्चा माल तैयार करनेकी कोशिश करनी चाहिये। मिसालके तौर पर, कारखानेके काममें आने लायक मोटे छिलकेवाले सख्त गन्ने और लम्बे रेशेवाली कपास पैदा करनेके बजाय गुड़ बनानेके लिए गावठी कोल्हूमें पेरा जा सके ऐसा नरम छिलकेका गन्ना और

गाम-कस्बोंके काम आ सके ऐसी छोटे रेशेवाली कपास पैदा करनी चाहिये। बची हुई जमीनका उपयोग आसपासके मिलोंकी कपासकी कमीको पूरा करनेमें किया जा सकता है। कारखानोंके लिए जरूरी गन्ना तम्बाकू, जूट और केवल व्यापारिक फसलें लेना बन्द कर देना चाहिये या उनका प्रमाण जहां तक बने घटा देना चाहिये। किसान इस नीति पर अमल करें, इस दृष्टिसे जिस जमीनमें उपर्युक्त व्यापारिक फसलें ली जाती हों उस पर भारी कर डाल जायं अथवा किसानोंसे अधिक जमीन महसूल लिया जाय। और साथ ही ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये जिससे केवल सरकारकी इजाजत लेकर ही वे व्यापारिक फसलें उगा सकें। ऐसा होने पर अनाजके बदले व्यापारिक फसल लेनेका किसानोंका उत्साह नहीं रहेगा। कोई ऐसा उपाय किया जाना चाहिये जिससे कुल मिलाकर खेतीकी पैदावारकी कीमतका स्तर उद्योगोंकी पैदावारके मुकाबले कुछ ज्यादा हो।

तम्बाकू, जूट, गन्ने आदिकी व्यापारिक फसलें दो तरहसे नुकसानदेह हैं। इनकी वजहसे मनुष्यके लिए जरूरी अनाज और ढोरोंके लिए घास चारेकी पैदावार कम होती है। क्योंकि व्यापारिक फसलोंके बजाय अनाजकी फसल ली जाय तो उसमें से ढोरोंके लिए घास-चारा भी निकल आता है।

कारखानोंके लिए पैदा की जानेवाली गन्नेकी फसल घट जानेका परिणाम यह होगा कि गुड़का उत्पादन कम हो जायगा। लेकिन यह कमी आजकल ताड़ीके लिए जो ताड़के पेड़ छेद दिये जाते हैं उनमें या खजूरके पेड़ोंसे गुड़ बनाकर पूरी की जा सकती है। और जरूरत मालूम हो तो इसके लिए बंजर भूमिमें पैदा हुए ताड़ या खजूरके पेड़ोंका भी उपयोग किया जा सकता है। साथ ही इस कामके लिए ऐसी किसी बंजर भूमिमें ताड़ और खजूरके पेड़ उगाये भी जा सकते हैं। आज जिस मकसमें बढ़िया जमीनमें गन्ना बोया जाता है वह अनाज और घासचारा पैदा करनेके काम आ सकती है। [illegible] ढोरोंकी बड़ी जरूरत है।

ढोरोंके लिए चारा

गांवके ढोरोंके लिए चारेकी व्यवस्था करनेकी जरूरत बातोंमें जितना भी जोर दिया जाय उतना थोड़ा है। इसी पर गायके

सिंचाईका आधार है बल्कि इसमें ही खेतीकी व्यवस्थाकी बुनियाद भी रह सकते हैं। इसके बिना सारी खेती जुए जैसा साहस हो जाती है। इसलिए हुए तमाम छोटे तालाबोंको दुरुस्त कराने और जो मिट्टीसे भर गये हों उन्हें गहरे कराने तथा नहर सुधारकी एक जबरदस्त हलचल शुरू की जानी चाहिये। आजकल चावल कूटने या आटा पीसनेकी मिलोंमें जो एंजिन काममें आते हैं उन्हें सरकार कुओंसे पानी निकालनेके काममें ले सकती है। पानीकी जरूरी सुविधाके बिना जमीनको अच्छी तरह खाद नहीं दिया जा सकता क्योंकि बिना पानीके खाद नुकसान करता है।

हरिजन १८-५-'४६

खाद

कूड़ा-कचरा, हड्डियां और मल वगैरा जो बेकार चीजें आज गांवकी तन्दुरुस्तीको बिगाड़ रही हैं वे सब खाद बनानेमें उपयोगी हो सकती हैं। इस प्रकारका मिश्र खाद तैयार करना बहुत आसान होता है और वह गायके गोबरके खाद जितना ही काम देता है। हड्डियां और खली जो आम तौर पर विदेशोंमें भेज दी जाती हैं उनके बाहर न जाने दी जाय। गांवोंमें चूनेकी भट्टियोंमें हड्डियोंको थोड़ी आंच देकर चूनेकी चक्कियोंमें पीस लिया जाय और किसानोंको बांट दिया जाय।

ठेका लेनेवालोंको थोड़ी पेशगी मदद देकर गांवमें ठेकेसे खाद तैयार कराया जाय। इससे न सिर्फ गांवकी स्वच्छता ही बढ़ेगी बल्कि मिश्र और सादा खाद बनानेवाले भंगियोंका दर्जा खाद बेचनेवाले व्यापारियोंके रूपमें बढ़ जायगा।

गांवोंसे तिलहन ले जाकर उसके बदलेमें केवल तेल देनेवाली तेलकी मिलें सारी खली परदेश भेज देती हैं। इसलिए यह कहा जा सकता है कि ये मिलें जमीनको एक उत्तम प्रकारके खादसे वंचित कर देती हैं। इसे बिलकुल रोक दिया जाना चाहिये। गांवोंसे तिलहनको बाहर न जाने देकर उसे वहीं स्थानीय घानियोंमें क्यों पेरना चाहिये इस बातका यह एक मुख्य कारण है। इस प्रकार तेल और खली दोनों

बीज

खेतीके सुधारके लिए चुने हुए और सुधरी हुई किस्मके बीजोंकी खास जरूरत है। किसानोंको अच्छे बीज पहुंचानेके लिए व्यवस्था-तंत्र खड़ा करनेकी बड़ी जरूरत है। इसके लिए सहकारी समितियोंसे बढ़कर दूसरा कोई साधन नहीं है।

शोध

खेतीबाड़ीके संबंधमें सारी शोध व्यापारिक फसलोंके बजाय अनाज और ग्रामोद्योगोंके लिए कच्चा माल किस तरह पैदा किया जाय इस बारेमें होनी चाहिये न कि तम्बाकू जैसी नकद पैसा देनेवाली फसल और कारखानोंके लिए मोटे छिलकेवाले गन्ने तथा लम्बे रेशेवाली कपास जैसा कच्चा माल पैदा करनेके बारेमें।

पुष्टाहारकी चीजोंके लिए जमीनका बंटवारा

आजकल आहारके सवालने गंभीर रूप धारण कर लिया है लेकिन उसका तुरन्त कोई हल निकले ऐसा नहीं दीखता। इस सवालके दो पहलू हैं। पहला हरएक मनुष्यकी खुराकमें आवश्यक कैलरीकी कमीका और दूसरा मनुष्यके शरीरको टिकाये रखनेवाली रक्षात्मक खुराककी दीर्घकालीन कमीका। पहला सवाल तो किसी तरह हल हो सकता है लेकिन दूसरेका हल होना वर्तमान परिस्थितियोंमें मुश्किल है।

आम तौर पर यह मान लिया जाता है कि एक एकड़ जमीनमें पैदा होनेवाले अनाजमें से दूसरे किसी खाद्य पदार्थके बजाय अधिक कैलरी मिलती है। लेकिन इस कैलरीके सवालको एक ओर रखकर इतना याद रखना चाहिये कि अनाजमें से शरीर और स्वास्थ्यको टिकाये रखनेवाले तत्त्व बहुत कम मिलते हैं। इसलिए केवल अनाज खाकर ही इन तत्त्वोंको प्राप्त करनेकी बात सोचें तो हमें अनाजके बहुत ज्यादा की जरूरत होगी। इसके बजाय अनाजके बदलेमें या उसके साथ साथ फल, साकभाजी, मूंगफली, तिल आदि चीजें खुराकमें ली जायं तो पुष्टाहारके लिए आवश्यक और स्वास्थ्यको टिकाये रखनेवाले रक्षात्मक तत्त्व केवल अनाजकी अपेक्षा इस प्रकारकी खुराककी कम मात्रामें अधिक मिल सकते हैं। और अनाजके

बजाय आज जैसे फी-एकड़ प्रति एकड़ मिलनेवाली कैलरीका प्रमाण भी अधिक होता है। इस प्रकार हमारी दृष्टिसे मुक्ताहारका दुहरा लाभ है। और उससे हमारा सारा सवाल हल हो सकता है। एक तो उसमें प्रति व्यक्ति जमीनकी कम जरूरत होगी, दूसरे शरीरको बराबर तन्दुरुस्त रखनेके लिए खुराकमें जिन तत्त्वोंका होना जरूरी है वे भी ठीक मात्रामें मिल जायेंगे। यह हिसाब लगाया गया है कि आजकल हिन्दुस्तानमें खाद्य पदार्थोंकी खेतीके लायक जमीनका प्रमाण प्रति व्यक्ति ·७ एकड़ है। आज खेतीके सम्बन्धमें जमीनका जिस तरह बटवारा किया जाता है उसके अनुसार यह प्रमाण हमारी खुराककी आवश्यकताकी दृष्टिसे बहुत अपर्याप्त मालूम होता है। लेकिन मुक्ताहारके लिए खानेकी जरूरी चीजें प्राप्त करनेकी दृष्टिसे यदि खेतीकी व्यवस्था की जाय तो यही प्रमाण जरूरतसे ज्यादा मालूम होता है। क्योंकि उसके लिए प्रति व्यक्ति जरूरी जमीनका जो अन्दाज निकाला गया है वह केवल ·४ एकड़ है। किसी व्यक्तिकी आवश्यकी खुराकके लिए (बहुतकी जमीनमें) आजकी तरह केवल अनाज पैदा करनेके बजाय जमीनका इस ढंगसे बटवारा होना चाहिए कि उसमें मुक्ताहारकी सारी आवश्यक चीजें पैदा की जा सकें। पदार्थोंके इस पहलूकी और पहुनामि जाँच होनी चाहिये और उसके आधार पर एक निश्चित योजना तैयार की जानी चाहिए।

धान और चावल

१ मैसूर राज्यकी तरह सारी चावलकी मिलें बन्द कर देनी चाहिए।

२ चावलको पॉलिश करनेवाली सारी मशीनरियाँ बन्द कर देनी चाहिए।

३ बिना पॉलिश किये हुए या बिना छड़े हुए चावलमें अधिक पोषण शक्ति है, यह बात लोगोंको सिखाई जानी चाहिए और प्रचार किया या सिनेमाकी शिक्षा द्वारा ऐसे चावल खानेकी शिक्षा दी जानी चाहिये। पॉलिश किये हुए चावलकी बनावटी रोक दी जानी चाहिए या उस पर नियंत्रण कर देना चाहिए कि चावलको किस प्रमाणमें छड़ा या पॉलिश किया जाय और उस पर सख्तीसे अमल होना चाहिये।

४ खासकर धानकी खेती करनेवाले प्रदेशोंमें जहां धानको कूटकर उसकी भूसी अलग करनेका धंधा औद्योगिक स्तर पर चलता हो वहां धानका अलग करनेके साफ करनेके और ऐसे ही दूसरे कीमती साधन कारीगरोंके समूहोंको उनकी सहकारी मंडली द्वारा भाड़से देनेकी व्यवस्था की जानी चाहिये।

५ बिना छड़े या बिना पॉलिश किये हुए चावलकी हिमायत करके उसे लोकप्रिय बनाना है इसलिए धानको एक प्रदेशमें से दूसरे प्रदेशमें लाने-ले जानेकी जरूरत होगी। लेकिन चावलकी अपेक्षा भूसीवाले धानका वजन अधिक होनेसे उसके लाने-ले जानेके भाड़ेकी वजहसे चावलकी कीमत बढ़ न जाय इस खयालसे धानके भाड़ेकी दरमें छूट रखनी चाहिये।

६ जिन प्रदेशोंमें धानकी भूसी अलग करने और चावलको छांटनेका काम एक ही किस्मके साधनोंसे होता है वहां धानको कूटकर उसकी भूसी अलग की जाती है। इसलिए जो चावल निकलते हैं, वे पॉलिश होकर निकलते हैं। ऐसे प्रदेशोंमें सरकार जो प्रयोग-केन्द्र रख गये हों उनके मार्फत दूसरे औजारोंके साथ-साथ धानकी भूसी अलग करनेकी लकड़ी पत्थर या मिट्टीकी चक्कियां दाखिल करनी चाहिये। जहां तक बन चावलको पॉलिश करनेवाले औजारोंको बढ़ावा न दिया जाय उलटे उनकी संख्या पर नियंत्रण रखनेके हेतुसे उन पर कुछ कर लगाया जाना चाहिये। साथ ही लाइसेन्स लेकर ऐसे औजार रखनेवाले लोग चावलको कितना पॉलिश करते हैं इस बात पर भी देखरेख और नियंत्रण रखना चाहिये। गांवकी जरूरतका धान तथा दूसरा अनाज और बीज गांवमें ही संग्रह करके रखा जाय और केवल बचा हुआ हिस्सा ही बाहर भेजा जाय इन सब कामोंके लिए सबसे अच्छा साधन मल्टी-परपज सोसायटी या सहकारी समिति ही है।

अनाज-संग्रह

यदि अनाज-संग्रहकी व्यवस्था जहांकी वहीं कर ली जाय तो संग्रह करनेकी बुरी पद्धतिके कारण जो बरबादी होती है, वह बन्द हो जायगी और अनाजको इधरसे उधर लाने-ले जानेका व्यर्थ खर्च बच जायगा। बड़े

सूची